मुक्तानंद जो संत शौर्यवान है उनमें स्वयंश्री हरि व्यापमत है

पूज्य श्री नारायणभाई

सर्वजीवहितावह ग्रंथमाला - ७०

संस्थापक: अ.मु.प.पू. श्री नारायणभाई गी. ठक्कर
श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
अमदाबाद - १३

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन का प्रतीक

प्रतीक में श्री स्वामिनारायण भगवान के चरण कमल में सामुद्रिक शास्त्र में वर्णन किये गये भगवत्स्वरूप के सोलह विलक्षण चिन्ह हैः

***दाहिने चरण कमल में नौ चिन्हः**

स्वस्तिक मांगल्यमय भगवत्स्वरूप को सूचित करता है।

अष्टकोण उत्तर-दक्षिण-पूरब-पश्चिम-अग्नि-ईशान-नैऋत्य-वायव्य आठों दिशा में भगवत्-करूणा बह रही है, इसका प्रतीक है।

ऊर्ध्वरेखा भगवत्कृपा से जीवों का अविरत ऊध्वीकरण दर्शित करता है।

अंकुश सर्व को अंकुश में रखने, सर्व के कारण रूप ऐश्वर्य का प्रतीक है तथा अंतःशत्रु को बस में रखना सूचित करता है।

ध्वज ध्वज अथवा केतु सत्यस्वरूप भगवान की विजय पताका है ।

वज्र भगवत्स्वरूप का वज्र तुल्य शक्तिशाली बल जीवों के दोषों को नष्ट कर काल-कर्म-माया के भय से मुक्त करता है, यह निर्देश देता है।

पद्म जलकमलवत् निर्लेप करने वाले भगवत्स्वरूप की करूणामय मृदुता को सूचित करता है।

जांबुफल भगवत्स्वरूप में जो सम्मिलित है उनको प्राप्त दिव्य सुखरूप रस का प्रतीक है।

जव अग्नि में जव, तल आदि अनाज़ की आहुति देकर अहिंसामय यज्ञ करने वाले एवं भगवत्स्वरूप में सम्मिलित है उनके धन-धान्य एवं योगक्षेम का भगवान स्वयं वहन करते है, यह सूचित करता है।

***बाये चरण कमल में सात चिन्हः**

मीन विपरित प्रवाह में बहकर उद्‌भव स्थान तक पहुँचती मीन की सदृश ऐश्वर्य-सुख के उद्‌भव स्थान भगवत्स्वरूप की प्राप्ति सूचित करता है।

त्रिकोण जीव को मनोव्यथा, व्याधि, आपत्ति से मुक्त करवा कर ईश्वर, माया, ब्रह्म की त्रिपुटी से पर परब्रह्म-स्वरूप में स्थित करने का निर्देशक है।

धनुष अधर्म से निज आश्रित का रक्षण करने का प्रतीक है।

गोपद भगवत्प्रिय गोवंश और भगवत्प्रिय सत्पुरूषों के परोपकारी लक्षण को सूचित करता है।

व्योम भगवत्स्वरूप के आकाशवत् निर्लेप भाव की सर्वत्र व्यापकता सूचित करता है।

अर्धचन्द्र भगवत्स्वरूप के घ्यान के द्वारा चँद्रकला की सदृश वृद्धि होकर पूर्णता को प्राप्त करता है, यह दर्शित करता है।

कलश भगवत्स्वरूप की सर्वोपरिता एवं परिपूर्णता का प्रतीक है।

प्रतीक में स्थित भगवत्स्वरूप के चिन्ह के रहस्य को दृष्टि समक्ष रखकर, सर्व जीव का हित हो ऐसी निःस्वार्थ ज्ञान-ध्यान-सेवा प्रवृत्ति सदैव करते-करवाते रहने के मिशन के पुरूषार्थ में भगवत्कृपा बरसती रहे, ऐसी श्री हरि के चरण कमल में प्रार्थना।

।। श्री स्वामिनारायणो विजयतेतराम् ।।

मुक्तानंद जो संत शौर्यवान है उनमें स्वयंश्री हरि व्यापमत है

पूज्यश्री नारायणभाई

सर्वजीवहितावह ग्रंथमाला

७०

: संस्थापक :

• अ. मु . प. पू . श्री नारायणभाई गी. ठक्कर •

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन

अहमदाबाद-१३

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
सर्वजीवहितावह ग्रंथमाला
❊ प्रकाशन समिति ❊

: प्रेरक - मार्गदर्शक :
❊ अ. मु. प. पू. श्री नारायणभाई गी. ठक्कर ❊

©श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन, अहमदाबाद
(रजि. नं. ई/४५४६/अहमदाबाद : १९८१)
इन्कमटेक्स एक्षेम्पशन u/s 80(G)5

प्रथम संस्करण
प्रतियाँ : १०००
२००७, १६, फरवरी
सं. २०६३, महा वद चौदश

सेवा मूल्य : रु.५/-

प्रकाशक
श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
८, सर्वमंगल सोसायटी, पूज्यश्री नारायणभाई मार्ग
नारणपूरा, अहमदाबाद - ३८००१३ ✆ : २७६८२१२०

मुद्रक
भगवती ओफसेट
वारडोलपूरा, अहमदाबाद

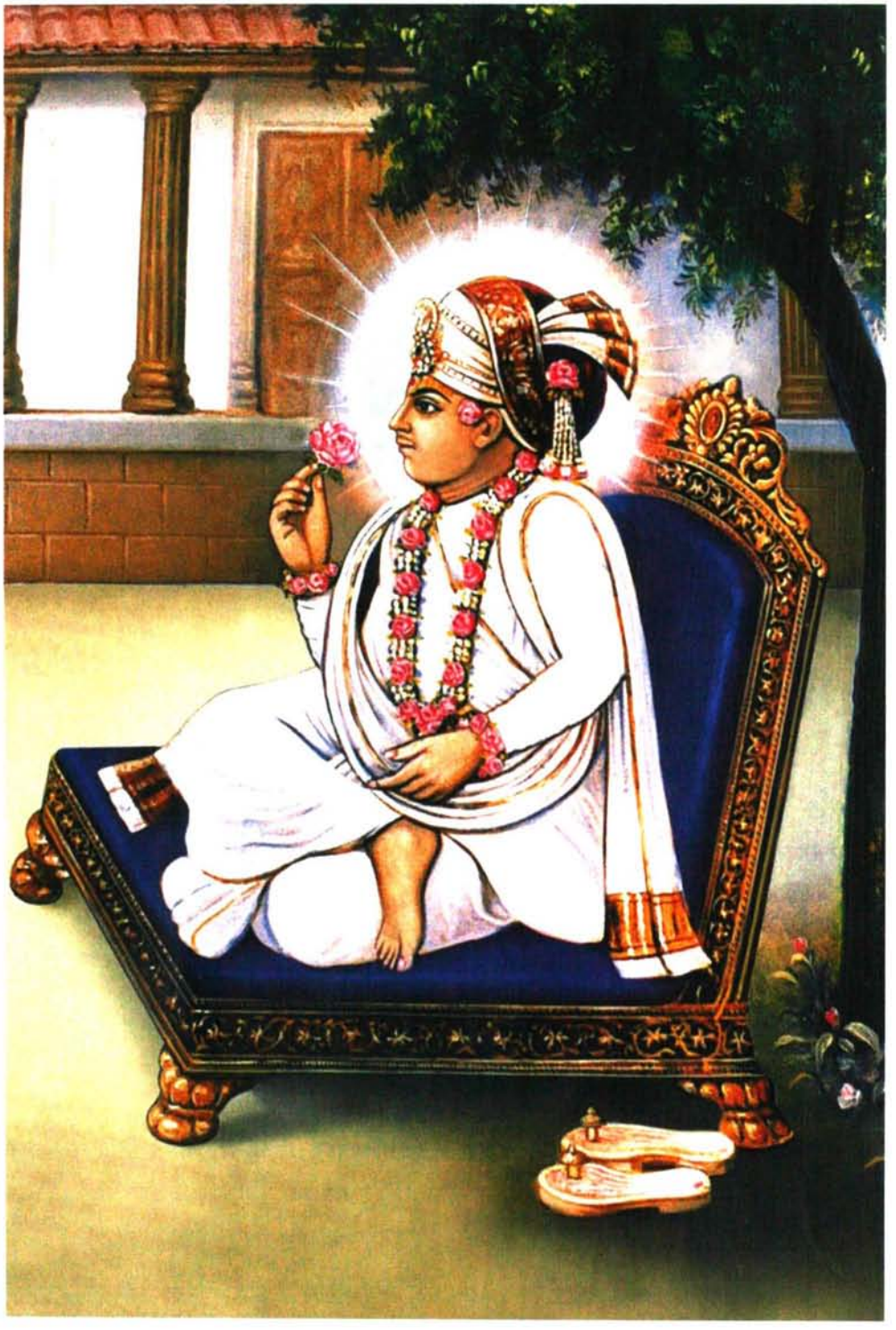

सर्वोपरि उपास्य मूर्ति

पूर्ण पुरुषोत्तम श्री स्वामिनारायण भगवान

अर्पण

अनंतकोटि मुक्त के
स्वामी एवं सदा साकार
दिव्य मूर्ति ऐसे परम कृपालु
श्री स्वामिनारायण भगवान के
गूढ़ रहस्य ज्ञान को समझाने वाले,
महाप्रभु के सुखनिधि स्वरूप की सर्वोपरिता
सर्वत्र प्रवर्तित करने वाले तथा अनादिमुक्त की
सर्वोत्तम स्थिति का अनुभव करवाने वाले
-इस प्रकार समग्र सत्संग और मानव कुल
पर महद् उपकार करने वाले परम कृपालु
अनादि महामुक्तराज़
प. पू. श्री अबजीबापाश्री के
चरणकमलों में सादर समर्पित

●

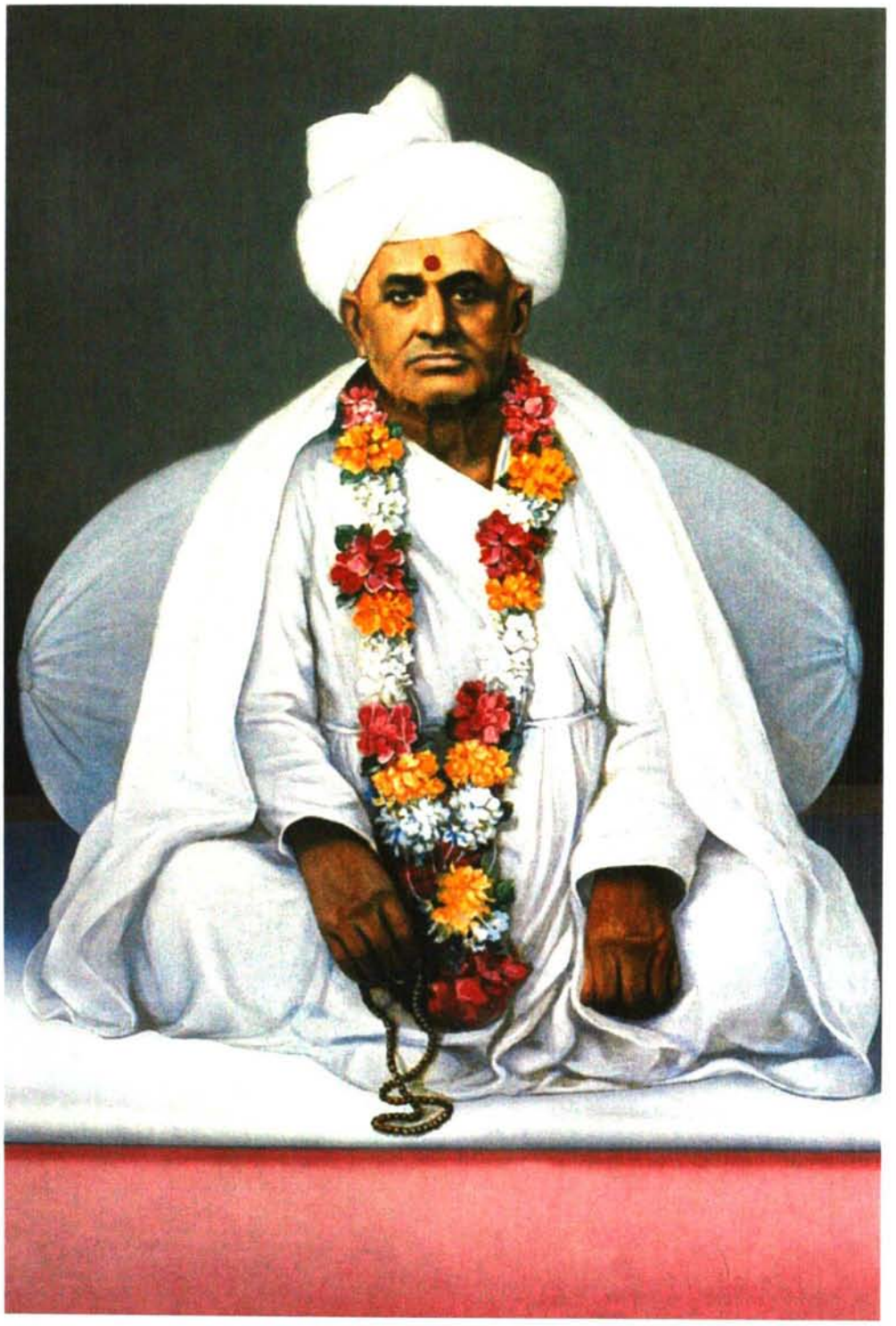

रहस्यज्ञान प्रदाता

अनादि महामुक्तराज श्री अबजीबापा

अर्घ्य

श्रीजीमहाराज़ तथा बापाश्री के
सर्वोपरि तत्त्वज्ञान को वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत
कर आध्यात्मिक, सामाजिक तथा शिक्षा क्षेत्र में
अद्वितीय योगदान देने वाले, धर्मशुद्धि, संचालनशुद्धि एवं
चारित्र्यशुद्धि के प्रखर हिमायती तथा चैतन्य का ऊर्ध्वीकरण
करने रूपी ब्रह्मयज्ञ की आहलेक जगाने सर्वजीवहितावह
संस्था **श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन** की
स्थापना करने वाले करुणा मूर्ति सद्‌गुरुवर्य
अनादि मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई के
चरण कमल में शतकोटि वंदन

●

संस्थापक

अनादि मुक्तराज

पूज्यश्री नारायणभाई गीगाभाई ठक्कर

संपादकीय विशेष

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन ऐसी ग्रंथ श्रेणी प्रकाशित-संपादित करने को उत्सुक है, जो समग्र मानव जाति के लिये कल्याणकारी हो एवं जिसके पठन से भारतीय संस्कृति का उच्चत्तम उद्देश्य सार्थक होता हो।

वर्तमान बुद्धियुग में उच्च शिक्षा का विस्तार प्रतिदिन बढ़ रहा है। उच्च शिक्षा का मूल उद्देश्य जीवन में उच्चतर मूल्य प्रस्थापित करना है, जीवन का सर्वोच्च मूल्य परमात्मा के परम सुख की अनुभूति में स्थित है। इन उद्देश्यों की ओर पथदर्शित करने में यह ग्रंथ श्रेणी सहायक होगी ऐसी अपेक्षा है।

शिक्षा, विज्ञान एवं यंत्रविद्या के अविरत बढ़ते हुए व्याप को हमें इस प्रकार ढ़ालना है कि केवल भौतिक सुख की प्राप्ति का साधन न बनकर, मानव के आंतरिक विकास में उच्चत्तम सहायक हो; साथ ही हमें ऐसी समझ का प्रसार करना है कि उत्क्रांति का अंतिम लक्ष्य उत्तरोत्तर विकसित होकर परमात्मा के दिव्य सुख में सम्मिलित होने में है।

दिव्यानंद की प्राप्ति के लिये अविरत विकसित होने की प्राकृतिक अंतःप्रेरणा मानव को ईश्वर द्वारा दिया गया अनमोल उपहार है। यह ऐसा सूचित करता है कि हम सब साथ मिलकर ऐसी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थिति का निर्माण करें, जिससे जीवन के ऊर्ध्वीकरण की प्रक्रिया निर्बाध रूप से पूर्णतः पल्लवित हो। इस कार्य को गति प्राप्त हो ऐसे प्रेरणादायी साहित्य का सर्जन करना आवश्यक है।

मानव जाति के आध्यात्मिक एवं सामाजिक श्रेय के हेतु श्री स्वामिनारायण भगवान ने, जीवन को अविरत ऊर्ध्व बनाकर,

आत्यंतिक दिव्य सुख की प्राप्ति हो ऐसा समन्वयकारी ज्ञानमार्ग प्रस्थापित किया है; उनकी श्रीमुखवाणी वचनामृत तथा शिक्षापत्री में इस तत्त्व ज्ञान की गहनता अनन्य है एवं सविस्तार सरल भाषा में प्रस्तुत है। इसके अतिरिक्त स्वयं के ब्रह्मनिष्ठ संत एवं गृहस्थ मुक्तपुरूष द्वारा सर्वहितावह साहित्य भी विपुल मात्रा में सज्जित करवाया है।

उपर्युक्त ग्रंथो में सर्वग्राह्य भारतीय संस्कृति तथा जीवन जीने की वास्तविक दिशा दर्शित की गई है। अतः इस ग्रंथ श्रेणी में सर्वजन पूरब के हो या पश्चिम के, सभी को दिव्यता की ओर अग्रसर होने में पथदर्शक हो, ऐसे आदर्श तथा ज्ञान को अर्वाचीन ज्ञान के प्रकाश में प्रस्तुत करने का उत्तम प्रयत्न किया जायेगा। हमें विश्वास है कि इससे मानव जीवन में संवादिता आयेगी एवं आधुनिक जीवन की विषमता क्रमशः कम होते हुए दूर हो जायेगी।

भारत या विश्व के अन्य साहित्य जिसमें दर्शित विचार हमारे उद्देश्य के साथ सुसंगत होंगे, उन्हे भी इस ग्रंथ श्रेणी में सम्मिलित किया जायेगा।

हमारी ईच्छा यह है कि इस ग्रंथ श्रेणी के पुस्तक केवल गुजराती भाषा में ही नहीं, अपितु हिंदी, अंग्रेजी आदि भाषा में भी प्रकाशित करें, जिससे अन्य भाषी पाठक भी इस ग्रंथ श्रेणी से लाभांवित हो।

मिशन की इस प्रवृत्ति की सफलता प्राप्ति में सभी का सहकार प्राप्त हो एवं मिशन के सर्व कार्य में सदैव प्रभु कृपा संलग्न हो, यही अभ्यर्थना।

दासानुदास
नारायणभाई गी. ठक्कर
स्थापक प्रमुख
श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन

सं. २०४२, श्रीहरि जयंती
अप्रैल १८, १९८६
अहमदाबाद

निवेदन

मानवजीवन के सर्वोच्च ध्येय आत्यंतिक मोक्ष के हेतु तथा प्रभु की साक्षात् प्राप्ति के लिये तत्त्वज्ञान से संबंधित अनेक सत्शास्त्र हमें उपलब्ध हैं। श्रीजीमहाराज के विधानानुसार शास्त्रों के गूढार्थ स्वयं के बुद्धिबल से समझ नहीं सकते,केवल सत्पुरुष द्वारा ही समझ सकते हैं। सर्वोपरि भगवान स्वामिनारायण के स्वरूप में आत्यांतिक स्थिति को प्राप्त मुक्त, मनुष्य को दो प्रकार से उपदेश देकर मार्गदर्शक बनते हैं। एक तो स्वयं की उपदेशात्मक वाणी व्दारा तथा दूसरा स्वयं के आदर्शरूप सदाचारमयी वर्तन द्वारा। अनादि मुक्तराज श्री नारायणभाई में, उनके योग में आये हरेक व्यक्ति को उनकी पूर्ण मुक्तदशा का अनुभव अवश्य ही होता था। मुक्तराज़ केवल आध्यात्मिक पथदर्शक ही नहीं थे, अपितु एक प्रतिभा संपन्न, व्यवहार कुशल एवं उत्तम प्रशिक्षक थे। धर्मशुद्धि तथा संचालनशुद्धि के प्रखर हिमायती थे। जीवन के सर्वांगी विकास के हेतु आवश्यक सामाजिक, व्यवहारिक तथा परमार्थिक ऐसे हरेक क्षेत्र के ज्ञाता, जीवन में श्रेय तथा प्रेय उभय के सुयोग्य विकास प्राप्ति में सहायक सद्गुरूवर्य थे। उनके योग समागम एवं सेवा का अलभ्य लाभ अनेक मुमुक्षुओं ने लिया, परंतु आनेवाली पीढ़ी को उनके जीवन दर्शन तथा उपदेशामृत में से ही जीवन पाथेय प्राप्त करना रहा। ऐसा अलभ्य लाभ आनेवाली पीढ़ी को सरलतापूर्वक प्राप्त होता रहे, इस उद्देश्य से इस पुस्तिका का प्रकाशन करते हुए कृतकृज्ञता का अनुभव करते हैं।

यह लघु पुस्तिका प्रकाशित करते हुए हम हर्ष तथा विषाद के मिश्रित भाव की अनुभूति करते हैं। हर्ष के भाव की अनुभूति का कारण है कि प्रभु के दिव्य स्वरूप के साथ अखंड संलग्न होकर पूर्ण मुक्त दशा में जीवन व्यतीत करने वाले सत्पुरुष कैसे होते है? इसका अलौकिक चरित्रण का स्पष्ट दर्शन कर सके एवं विषाद का कारण है कि ऐसे महान संतमूर्ति पीछले कुछ समय से हमारे बीच मनुष्य देह से विद्यमान नहीं है,जो वास्तव में आघातजनक घटना है।

इस संस्था के रजत जयंति पर्व पर ही उनका संक्षिप्त जीवन दर्शन प्रकट होता है, यह एक सुभग अवसर है। पाठकवृंद इस पुस्तिका का सहर्ष स्वीकार कर उसमें से आदर्श जीवनशैली अनुभव गम्य बनाने को प्रयत्नशील होंगे,ऐसी आशा करते है।

अंततः भगवान श्री स्वामिनारायण,परम कृपालु बापाश्री, सद्‌गुरु तथा समर्थ गुरुवर्य मुक्तराज़ परम पुज्य श्री नारायणभाई की प्रसन्नता की प्रार्थना करते हैं।

प्रकाशन समिति
श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन
अमदावाद

सं. २०६३, महा वद चौदश
ई. स. २००७, १६ फरवरी

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ
१	पश्चाद् भूमीका	१
२	परिवार परिचय	६
३	प्रागट्य एवं बाल्यकाल	९
४	शैक्षणिक कार्यकाल	१७
५	अनोखा गृहस्थजीवन	२२
६	आदर्श सहचारिणी	२५
७	व्यवसाय	२७
८	आध्यात्मिक दिव्य जीवन	३१
९	अलौकिक मुक्तमंडल	३५
१०	श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन की स्थापना	३८
११	मुक्तराज का व्यक्तित्व, कल्याणकारी उदात्त एवं सामर्थ्य	६३
१२	पर्यटन द्वारा कल्याण	६७
१३	सत्संग के विकासलक्षी कार्य	७०
१४	आध्यात्मिक मार्गदर्शक	७२
१५	बीमारी की अलौकिक लीला	७५
१६	आखिरी बीमारी एवं अंतिम विदाई	७८
१७	अमृत विंदु	८३

पूज्यश्री नारायणभाई

(१) पश्चाद् भूमिका

सद्गुरु श्री मुक्तानंद स्वामी - सत्संग की माँ। उनको एक बार श्रीजीमहाराज़ ने पूछा, स्वामी आप हमें कैसे समझते है? तब स्वामी सहजतापूर्वक बोले "हे महाराज़! महाभारत काल में हुए श्रीकृष्ण परमात्मा ही आप स्वयं प्रभु। इसमें पूछना क्या?"यह सुनकर श्रीजीमहाराज़ मर्मपूर्वक हँसकर बोले, "स्वामी आप काले तालाब पर जाईये वहाँ रवजीभाई आप को बतायेंगे।" श्रीजीमहाराज़ की आज्ञा होते ही स्वामीश्री ने काले तालाब की राह ली। राह में मुक्तानंद स्वामी को एक संत मिले। मुक्तानंद स्वामी को त्वरा से जाते हुए देखकर पूछा, साधुराम! कहाँ चले? स्वामी ने महाराज़ के साथ हुए वृतांत की जानकारी दी। तब संत ने कहा स्वामी आप स्वामिनारायण भगवान को श्री कृष्ण समझते है! तो इनमें से कौन से श्री कृष्ण आपके स्वामिनारायण है? ऐसा कहकर उस संत ने स्वयं की हथेली सामने की तो मुक्तानंद स्वामी को उस संत की हथेली में असंख्य श्रीकृष्ण दृष्टिगोचर हुए। मुक्तानंद स्वामी तो यह दृष्टिकृत कर हतप्रभ हो गए। यह क्या! इतने सारे कृष्ण! जो, स्वयं की हथेली में इतने सारे कृष्ण के दर्शन करवा सकते है वे संत तो कृष्ण से अति महान कहे जाए। मुक्तानंद स्वामी को आश्चर्य चकित देखकर वे संत बोले "स्वामी आप जिस श्री कृष्ण को परमात्मा कहते है उन्हें तो मूलपुरुष कहते है तथा उस मूलपुरुष से उपर तो महाकाल है, महाकाल के उपरी वासुदेवब्रह्म है, वासुदेवब्रह्म से उपर मूलअक्षर है, उनसे उपर श्रीजीमहाराज़ के मुक्त हैं वे सर्व

के उपरी नियंता, पूर्ण पुरुषोत्तम श्री स्वामिनारायण भगवान हैं। वे सर्वोपरि है तथा उनसे उपर कोई नहीं है। श्री स्वामिनारायण भगवान स्वयं स्वस्वरूप के सुख से सुखी है, अन्य सभी उनके द्वारा प्रदान किया हुआ सुख भोगते है। हम तो उस सर्वोपरि महाप्रभु के मुक्त है एवं आप भी उनके मुक्त है। श्रीजीमहाराज़ ने आप की स्थिति को प्रतिरोधित कर रखी है, अतः आप उन्हें पहचान न सके" यह कहकर वे संत अदृश्य हो गये।

जीवों के कल्याण हेतु श्रीजीमहाराज़ ने भिन्न-भिन्न प्रकार के अवतारों को पृथ्वी पर भेजा, परंतु वे कोई भी श्री हरिजी की सर्वोपरि उपासना को प्रर्वतित न कर सकें। वरन् सामान्य कोटि के जीव उन अवतारों में स्वयं से विशेष ऐश्वर्य के दर्शन कर उन अवतारों को भगवान समझकर उनका भजन करने लगे। अतः मुक्तों ने श्रीजीमहाराज़ को स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होने के लिये प्रार्थना की। अतएव श्री हरिजी अनंत मुक्तों को साथ लेकर इस पृथ्वी पर स्वयं की शुद्ध सर्वोपरि उपासना की स्थापना करने संवत १८३७ के चैत शुक्ल नवमी के दिन प्रकट हुए।

बाल्यकाल एवं वन विचरण के समय असंख्य लीला कर स्वयं का पुरुषोत्तम रूप ज्ञात करवाते हुए सत्संग में आये।स.गु. श्री रामानंद स्वामी ने श्रीहरिजी के संकल्पानुसार पूर्व से ही पूर्व भूमिका रूप से उद्धव संप्रदाय की स्थापना कर रखी थी। श्रीहरिजी के साथ मिलाप होते ही उनको दीक्षा देकर स.गु. श्री रामानंद स्वामी ने धर्मधुरा श्रीहरिजी को सौंप दी। उस समय भी पूर्व अवतरीत अवतारों की उपासना का जोर अधिक होने के कारण श्रीजीमहाराज़ ने स्वयं को सर्वप्रथम श्रीकृष्ण के भक्त कहा तत्पश्चात ज्यों-ज्यों जीव श्रीजीमहाराज़ तथा उनके मुक्त के संपर्क में आने

की वज़ह से उनकी पात्रता होती गयी त्यों-त्यों श्रीहरिजी ने स्वयं को क्रमशः श्रीकृष्ण जैसे कहा तथा आख़िरकार वस्तुतः जैसा है -श्री कृष्ण से अनेक गुना अधिक महान एवं स्वयं का सर्वोपरि परमात्मा स्वरूप समझाया। सामान्य जीव भी यह समझ दृढ़कर परमपद के अधिकारी हो ऐसे शुभ आशय से श्रीहरिजी ने स.गु. श्री गोपाळानंद स्वामी को स्वयं की सर्वोपरि उपासना का पालन –प्रवर्तन करवाने का कार्य सौंपकर मनुष्य लीला का समापन किया। स.गु.गोपाळानंद स्वामी ने उत्तरोत्तर इस महाकार्य को आगे बढाने की जिम्मेदारी स्वयं के समर्थ शिष्य स.गु. श्री निर्गुणदासजी स्वामी को सौंपी। श्रीहरिजी ने आत्यांतिक कल्याण के भगीरथ कार्य को गति देने स्वयं के संकल्प स्वरूप अनादि महामुक्तराज़ श्री अबजीबापाश्री का पृथ्वी पर संवत १९०१ के कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन अवतरण हुआ।

बापाश्री ने श्रीजीमहाराज़ के संकल्पानुसार श्री हरिजी की अकलूष सर्वोपरि उपासना के प्रर्वतन में अद्वितीय भूमिका प्रदान की। उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर असंख्य जीवों को श्रीहरिजी की वास्तविक महानता की मूलतः समझ दी। इसके अतिरिक्त श्रीहरिजी के साथ एकात्मभाव से संलग्न होकर अनादि मुक्त की स्थिति प्राप्त करने की रीति भी सिखायी। श्रीजीमहाराज़ की उपदेशात्मक वाणी को 'वचनामृत' ग्रंथ में संग्रहित किया गया है। उसमें श्रीजीमहाराज़ ने बात करते समय सभा में उपस्थित जीवों की पात्रता के अनुसार स्वयं को भक्त, अवतार, मुक्त तथा पूर्ण पुरुषोतम अवतारी कहा है। बापाश्री ने इन सभी बातों को अन्योन्य परिप्रेक्ष्य में वचनामृत के ही अलग-अलग आधार लेकर यथार्थ रूप से समझाकर श्रीजीमहाराज़ की सर्वोपरिता प्रस्थापित की है।

जो वचनामृत रहस्यार्थ प्रदीपिका नामसे प्रसिद्ध है।प . पू . बापाश्री को तो श्रीजीमहाराज़ ने स्वयं की सर्वोपरि उपासना प्रर्वतीत करने तथा स्वयं की दिव्यातिदिव्य अलौकिक सुख्र की नेग बाँटने भेजा था। अतः बापाश्री ने भी कोई कसर छोड़े बिना ये महद् उपकारक कार्य किये। संत हरिभक्त को लेकर बापाश्री गाँव-गाँव और घर-घर घूमते एवं श्रीहरिजी की मूर्ति का प्रसाद बाँटते।

श्रीजीमहाराज़ के आर्शीवाद तथा स. गु . श्री ब्रह्मानंद स्वामी की निष्ठा के प्रतीक समान मूलीधाम के श्री स्वामिनारायण मंदिर के शतवार्षिक पाटोत्सव अति धूमधाम से मनाया गया था। प. पू. बापाश्री भी उस समय संघ सहित मूली पधारे थे। वास्तव में तो यह पाटोत्सव मनाना संभव ही प. पू. बापाश्री के अलौकिक प्रताप के कारण हुआ था एवं धूमधाम से पूर्ण हुआ था। मूली से बलदिया लौटते समय अनेक छोटे- बड़े गाँवों का विचरण करते हुए प. पू. बापाश्री ध्रांगध्रा पघारे। शरीर में अनुकुलता न होते हुए भी बड़े-बड़े हरिभक्तों के घर पधारे, सभी को श्रीजीमहाराज़ की रसमयी मूर्ति के सुख्र में तर-बतर कि या। उस समय आर्थिक स्थिति एवं स्वभाव से उभय तौरपर गरीब, गीगाभाई ठक्कर को भी स्वयं के घर प. पू. बापाश्री की पधरावनी करने की ईच्छा हुई, परंतु संयोगोनुसार वे कुछ बोल न सकें। करूणा मूर्ति बापाश्री तो इस भोले भगत के भाव को जानते ही थे। अतः अन्य गाँव जाते समय गाँव के बाहर निकलने से पहले राह में गीगाभाई ठक्कर के घर के समक्ष ही लघुशंका के बहाने गाड़ी रूकवाई। गीगाभाई तथा उनकी धर्मपत्नी शाकुबेन के आनंद की सीमा न रही। प.पू.बापाश्री को लघुशंका की व्यवस्था स्वयं के घर में ही कर दी। लघुशंका कर बापाश्री घर में बिराजमान हुए। उस समय शेठ श्री शिवलालभाई

पारेख, अ.मु. प. पू. श्री सोमचंदभाई की बहन अ. मु. श्री दिवालीबा आदि उपस्थित थे। शेठ श्री शिवलालभाई ने गीगाभाई के सबसे छोटे पुत्र ११ माह के नारायण को पालने से लेकर प. पू. श्री बापाश्री की गोद में रखा। उस समय बापाश्री ने स्वयं के भाल के तिलक में से कुमकुम लेकर उस बालक की ओर अमी दृष्टि करते हुए उसके ललाट में टिका किया। बालक भी परभाव की प्रीती हो उस प्रकार से अनिमेष हँसते हुए प.पू. बापाश्री की अलौकिक मुखाकृति को निहारने लगा। पश्चात शेठ श्री शिवलालभाई ने प.पू. बापाश्री को प्रार्थना करते हिए कहा कि, "हे बापा! यह भगत के पुत्र भगत हो ऐसे आर्शीवाद दीजिये।" उस समय प.पू. बापा उस बालक के सर पर हाथ घूमाते हुए बोले ये तो श्रीजीमहाराज़ के महामुक्त है। श्रीजीमहाराज़ ने उनको अनेक जीवों के कल्याण तथा सर्वजीवहितावह कार्यो के लिये भेजा है।

यह बालक 'नारायण' अन्य कोई नहीं, वरन् अ. मु. प.पू. श्री नारायणभाई गीगाभाई ठक्कर, श्रीहरिजी के कृपाप्रसाद तुल्य श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन संस्था के प्रणेता, संस्थापक, आजीवन प्रमुख अर्थात् उसका हार्द।

(२) परिवार परिचय

इस मुक्तराज़ के माता-पिता अर्थात् गीगाभाई भाणजीभाई ठक्कर तथा शाकुबेन दोनों स्वभाव से अति सरल तथा धार्मिकवृत्ति के थे। भगवान श्रीस्वामिनारायण में अनन्य निष्ठा रखते गीगाभाई तथा शाकुबेन को प.पू. बापाश्री के प्रति अतूट स्नेह तथा श्रद्धा थे। सादगीमय प्रभू परायणजीवन व्यतीत करने वाला यह दंपति काँरवा तुल्य व्यवसाय अर्थात् रास्ता बनानेवाले मज़दूर का कार्य करते थे। जहाँ-जहाँ रास्ता बनाना हो वहाँ-वहाँ उनको जाना पड़ता था। अतः उनका कोई स्थायी घर या ठिकाना न था। रास्ता वनाने का कार्य करते थे, तथापि अंतःकरण में अविरत श्रीजीमहाराज़ का स्मरण रहता था। महा महेनत से प्राप्त थोड़ी आमदनी में से भी सर्व प्रथम भगवान को बीसवाँ हिस्सा अर्पण करते। आर्थिक मुसीबत तथा व्यवसायिक मुसीबत में भी भगवान की हरेक आज्ञा का अक्षरशः पालन करते एवं हँसते हुए संतोषपूर्ण जीवन व्यतीत करते।

एक दिन मनुष्य को पररखने में कुशल ज़ौहरी शेठ श्री शिवलालभाई पारेख को इस दंपति का मिलाप हुआ। ईमानदारी और निष्ठा से काम करता यह युगल शेठ की नज़र पर चढ़ गया। अपने साथ ध्रांगध्रां लाकर शेठ शिवलालभाई ने गीगाभाई और शाकुबेन को रहने की व्यवस्था कर दी एवं काम दिलवाया। होशियारी एवं लगन से काम करने की आदत के कारण गीगाभाई को मकान निर्माण के स्वतंत्र कोन्ट्राक्टर बना दिये। ध्रांगध्रां के स्वामिनारायण मंदिर के अग्र भाग का निर्माण गीगाभाई

ने किया है।

गीगाभाई और शाकुबेन को तीन पुत्र तथा दो पुत्रियाँ थे। सबसे बड़े पुत्र हरजीवनभाई छोटी उम्र में ही पिताजी के साथ काम में लग गये। अतएव अभ्यास न कर सके। वे स्वभाव से अति भोले और सरल थे। दूसरी पुत्री गोदावरीबेन भगवान की अनन्य भक्त थीं। भगवान श्री स्वामिनारायण में प्रेमलक्षणा भक्ति युक्त गोदावरीबेन निर्मल,पवित्र जीवन जीती थी। एकबार गोदावरीबेन श्रीहरिजी के प्रसादीभूत स्थलों की पंचतीर्थ करने निकलीं, घूमते हुए वे श्रीजीमहाराज़ की रासरमण भूमि पंचाला पहुँची। वहाँ उनको समाधि हुई और श्रीजीमहाराज़ की अद्‌भूत रासलीला के दर्शन हुए। समाधि में ही श्रीजीमहाराज़ ने उनसे कहा कि "आप जल्दी से घर जाईये, हम आपको धाम में ले जायेंगे।"समाधि में से जागृत होते ही वे घर लौंटी और चौबीस घंटे में देह त्यागकर श्रीहरिजी के सुख में लीन हो गयीं। तीसरे पुत्र अमृतलाल जो पढ़-लिखकर डॉक्टर बने। वे बुध्दिशाली तथा विद्वान थे। हरेक बात को वैज्ञानिक तौर पर छानबीन कर ही स्वीकार करते थे। गिने-चूने लोग ही पढ़ते थे, ऐसे समय में भी डॉक्टर होते हुए भी अति निर्मानी, भगवदीय तथा सेवापरायण थे। गरीब दर्दी का इलाज़ मुफ्त में ही करते थे। ध्रांगध्रां गाँव की पुरानी पीढ़ी आज भी उनको ठक्कर डॉक्टर के दुलारे नाम से याद करती है। चौथी पुत्री माणेकबेन भी अति धार्मिक और पवित्र थीं।श्रीजीमहाराज़ की आज्ञा पालन की वे अति आग्रही थीं। निज पति धनजीभाई के पश्चात पारायण करने का संकल्प किया। तत्पश्चात अचानक ही बीमारी बढ़ने के कारण, स्वयं का अंत समय करीब लगा, श्रीजीमहाराज़ लेने आये है, ऐसा प्रतीत हुआ। अतः उन्होंने मुक्तराज़ से प्रार्थना की, आप मेरी ओर

से श्रीजीमहाराज़ से प्रार्थना करें कि मेरा पारायण का संकल्प पूर्ण होने के पश्चात सुखपूर्वक धाम में ले जाए। मुक्तराज़ तो अति दयालू! उन्होंने श्रीजीमहाराज़ से प्रार्थना कर माणेकबेन का मनोरथ पूर्ण करवाया। कूछ समय के पश्चात धनजीभाई के मोक्षार्थे तीर्थधाम श्री अबजीबापाश्री की छत्री पर पारायण करवाने के बाद माणेकबेन ने देहत्याग किया। पाँचवे पुत्र हमारे मुक्तराज़ श्री नारायणभाई। पूज्य श्रीनारायणभाई में माता-पिता की सरलता, पवित्रता, धार्मिकता, ईमानदारी, सादगी, हरजीवनभाई का भोलापन, अमृतलालभाई का सेवाभाव तथा विद्वता, गोदावरीबेन की भक्तिभावना एवं निर्मलता और माणेकबा की धर्मपरायणता का सुंदर मिलन हुआ था।

३ प्रागट्य एवं बाल्यकाल

शाकुबेन तथा गीगाभाई जैसे उत्तम कोटि के माता-पिता के यहाँ मुक्तराज़ श्रीनारायणभाई का प्राकटय संवत १९७८ के माघ कृष्ण पंचमी, ई. स. १९२२ फरवरी १६, गुरूवार सुबह १०ः ४६ बजे हुआ था। पूज्य श्रीनारायणभाई माता के गर्भ में थे उस समय से ही श्रीजीमहाराज़ की मूर्ति अखंड दृष्टिगोचर करते थे। देह धारण करने के पश्चात भी घूमते-फिरते, उठते-बैठते, खेलते-खाते, मूर्ति को तो समक्ष ही दृष्टिकृत करते थे महाराज़ भी इस बाल मुक्त के साथ हँसते, बोलते, बात करते, ईशारे करते ऐसी अनेक प्रकार की लीला करते थे।

बाल्यकाल में ही पिता गीगाभाई अक्षरधाम निवासी होने से,पूज्य श्री नारायणभाई का परिवार अद्वितीय आर्थिक मुसीबत का अनुभव करने लगा। गीगाभाई के देहांत के समय पूज्य श्री नारायणभाई की उम्र सिर्फ पाँच साल की थी। अतः शाकुबा ध्रांगध्रां छोड़कर वढ़वाण माल्यापा में रहतीं भगीरथीबा के पास रहने आईं। जिससे कुछ काम एवं मदद मिल सके। संयोग से भगीरथीबा के पास वाला मकान भूतवाला होने की वज़ह से बहुत सस्ते में किराये पर मिल गया। कम किराये पर मकान तो मिला, परंतु इस मकान में भूत एवं जीन निवास करते थे। कोई घर में रहने आये उसे घर में से उठाकर बाहर फेंक देते थे। अतः बरसों से घर खाली ही पड़ा था, अतएव जर्जरीत हो चुका था। घर बड़ा होते हुए भी किराया बहुत कम था, अतः शाकुबा प्रसन्नता पूर्वक

स्वयं के संतानो के साथ रहने लगीं।

मुक्तराज़ ने माता से कहा हम सब मंज़िल पर रहेंगे। शाकुबा को बापाश्री ने कहा था तब से ही मुक्तराज़ के प्रति दिव्यभाव तथा महिमा थे एवं उनके वचन में विश्वास था, फलस्वरूप सभी मंज़िल पर रहने लगे। नीचे भूत और जीन कई प्रकार के आवाज़ करते, शरारत करते। माता मुक्तराज़ से पूछती "यह कैसी आवाज़ है?" तब मुक्तराज़ उत्तर देते "ये तो बच्चे खेल रहे है।" शाकुबा अत्यंत भोले स्वभाव की होने के कारण मुक्तराज़ की बात तुरंत मान लेती थी। मुक्तराज़ ने तत्पश्चात उन सभी भूतों का और सभी जीन का मोक्ष किया एवं भूत के घर को तीर्थ रूप बना दिया। तत्पश्चात उस घर में कभी भी किसी भूत ने किसी को तंग नहीं किया। मुक्तराज़ उस समय सिर्फ आठ वर्ष के थे,परंतु महाप्रताप दर्शित करते थे। ऐसा प्रताप देखकर मकान मालिक ने उसके बाद किराया लिया ही नहीं।

इस समस्त परिवार को भूत वाले घर में आराम से रहता देखकर गाँव के लोगों को भी अति आश्चर्य हुआ, वे सभी भी मुक्तराज़ की महिमा मानने लगे। मुक्तराज़ को एक सिद्ध पुरुष मानने लगे।

वढ़वाण में ही इस बालमुक्त ने पाठशाला जाना प्रारंभ किया। पाठशाला जाने से पूर्व माता ने शुरु से ही मुक्तराज़ को कहा नारायण पाठशाला जाते व आते समय स्वामिनारायण-स्वामिनारायण का मंत्र बोलते हुए आना –जाना, कभी किसी स्त्री का स्पर्श न करना। अनजाने में कभी किसी का स्पर्श हो जाये तो आकर स्नान करना। मुक्त को ऐसी किसी आज्ञा या सुचना की आवश्यकता नहीं रहती, तथापि एक आदर्श की स्थापना हेतु निज

माता को वचन दिया एवं जीवन पर्यंत उस वचन का पालन किया। बालमुक्त प्रथम से ही विद्याभ्यास में अत्यंत निपुण व तेजस्वी थे, साथ में निर्मानीभाव,शिस्तता, आज्ञापालन में सावधानी आदि गुणों के कारण शिक्षकगण के प्रिय विद्यार्थी हो गये थे। शाला में प्रभात की प्रार्थना तथा कविता ऐसे मधुर कंठ से गाते कि सभी का मन हर लेते थे। किसी भी वस्तु को एकबार पढ़ते कि तुरंत ही याद हो जाती थी। दूसरी बार पढ़ने की आवश्यकता ही नहीं रहती थी। उनके द्वारा बनाई गई नोटबुक इतनी व्यवस्थित होती थी कि सभी विद्यार्थी मित्र उसे पढ़ने ले जाते थे, स्वयं तो उदारता की मूर्ति होने के कारण सभी को नोटबुक देते तथा अगर किसी को कुछ न आता हो तो उसे सिखाते भी थे। कई बार तो विद्यार्थी मित्रों को शिक्षक की अपेक्षा पूज्य श्री नारायणभाई के पास से अधिक सरलता से समझ जाते थे।

शाला से आकर मित्र खेलने के लिये बुलाते तो,सभी को जाडेश्वर महादेव का मंदिर जो एकांत में स्थित है, वहाँ मित्रों को ले जाते, अन्य खेल खेलने की जगह सभी को पास बैठाकर ऐसी सुंदरता पूर्वक महाराज़ के अलौकिक प्रताप तथा महिमा की बातें करते कि,मित्र उन बातों को सुनने में आसपास की सुध भुला देते। स्वयं को तो सदैव महाराज़ का साक्षात्कार था, अतएव सहज अंतःवृति की प्रकृति भी थी। स्वयं के मित्र भी भगवान की ओर अग्रसर हो ऐसे आशय से महाराज़ की महिमा की बातें कर उनको ध्यान करना सिखाते। मित्र भी मुक्तराज़ की बातों से प्रभावित होकर वे जिस प्रकार से सिखाते उसी प्रकार से करते थे। इस प्रकार मुक्तराज़ स्वयं जो उद्देश्य लेकर पृथ्वी पर प्रकट हुए थे, जीवों का कल्याण करना। उसकी शुरुआत बचपन से

ही कर दी थी।

एक बार मुक्तराज़ और उनका एक मित्र परीक्षा देने जा रहे थे, रास्ते में बिल्ली ने रास्ता काट दिया। मित्र वहीं रुक गया।मुक्तराज़ ने पूछा 'क्यों रुक गये?' मित्र ने कहा, ' बिल्ली ने रास्ता काटा अतः अपशगुन हुए,जिससे परीक्षा अच्छी नहीं होगी।' यह सुनकर मुक्तराज़ हँसने लगे और बोले 'यह बिल्ली हमारा भविष्य निश्चित करेगी? वह बेचारी भी एक जीव है। वह हमें क्या अपशगुन करेगी? हमारे साथ महाराज़ है। तुम चलो आज की परीक्षा तो सबसे अच्छी होगी। ऐसे गलत वहम और अंधविश्वास में कभी भी नहीं मानना चाहिये। सदैव महाराज़ को याद कर, उनको साथ रखकर सर्व कार्य करें तो सभी शगुन ही है। अपशगुन होंगे ही नहीं।'मुक्तराज़ के ऐसे दृढ़ वचन सुनकर मित्र को बल मिला और वह चलने लगा। मुक्तराज़ की परीक्षा तो सदैव अच्छी ही होती, परंतु उस दिन मित्र की परीक्षा भी बहुत ही अच्छी हुई। मुक्तराज़ सदा की तरह प्रथम क्रमांक से पास हुए तथा उनका मित्र द्वितीय क्रम से पास हुआ। उसे सानंद आश्चर्य हुआ। मुक्तराज़ के वचन में उसे विश्वास हुआ और उसने हरेक कार्य की शुरूआत करने से पहले भगवान की स्मृति कर उनको साथ रखने का निश्चय किया।

मुक्तराज़ मित्रों के अंधविश्वास को दूर करते, महाराज़ में श्रद्धा रखने के बल को बढ़ाते तथा निर्भय भी बनाते थे।

घनश्याम महाराज़ की मुक्तराज़ पर अलौकिक प्रसन्नता

श्रीजीमहाराज़ के संकल्प से ही जीवों के कल्याण हेतु इस पृथ्वी पधारे हो उनपर श्रीजीमहाराज़ की संपूर्ण प्रसन्नता हो इसमें शक की कोई गुंजाईश नहीं। ऐसे मुक्त जब स्वयं के दर्शन करने आए तब भगवान प्रतिमा में स्थित प्रत्यक्षभाव को प्रकट कर मुक्तों

पर प्रसन्नता जताए, उसमें मुक्त को कोई आश्चर्य नहीं है। यह तो सामान्य जीवों के लिये सानंदाश्चर्य की बात है।

मुक्तराज़ छोटे थे तभी से माता के संग हंमेशा मंदिर जाते थे। वढ़वाण आने के पश्चात भी वह नियम चालू रहा। हररोज़ शाम को मंदिर दर्शन करने जाते। वहाँ के घनश्याम महाराज़ के समक्ष खड़े होकर एकाग्रवृत्ति से मूर्ति को निहारते रहते, आनंदित होकर सुंदर मधुर स्वर से भगवान को कीर्तन सुनाते। जैसा सुहाना मुक्तराज़ का व्यक्तित्व था वैसा ही मघुर कंठ था। इतनी छोटी उम्र में ही मुक्तराज़ को सौ कीर्तन कंठस्थ थे। मुक्तराज़ उस समय आठ वर्ष की उम्र के थे। एकाग्रवृत्ति से महाराज़ के समक्ष मधुर कंठ से गाते कीर्तन सुनने, दर्शन करने आये हुए भक्तजन भी मुक्तराज़ की आसपास बैठ जाते। प. पू. ध. धू. आचार्य महाराज़ श्री तथा गादीवाली (उनकी पत्नी) भी परदा डालकर मुक्तराज़ के मधुर कंठ से गाये कीर्तन सुनते। कीर्तन ऐसे सुमधुर स्वर से गाते कि भगवान भी स्वयं के इस लाड़ले मुक्तराज़ पर प्रसन्नता दर्शाते, प्रसन्न होकर प्रतिमा भाव छोड़कर उनको भेटते, उनके साथ बातें करते, हाँथों के हाव-भाव से मुक्तराज़ को प्रसन्न करते, कीर्तन में मग्न होकर डोलने लगते। मुक्तराज़ तथा महाराज़ के वार्तालाप में वहाँ बैठे भक्तजनों को सिर्फ मुक्तराज़ की ही आवाज़ सुनाई देती। महाराज़ के दिव्य दर्शन और आवाज़ सुनने का सौभाग्य उनको प्राप्त न होता। मंदिर में रहते साधु भक्तिजीवनदासजी भी मुक्तराज़ कीर्तन गाते हो उस समय स्वयं को रोक नहीं सकते सुनने रूक जाते थे। उनको यह सद्‌भाग्य प्राप्त होता था। वे श्रीजी के अनन्य भक्त थे। निष्काम - निर्मान - निःस्वाद आदि नियम दृढ़तापूर्वक पालन करते, निर्मल भी उतने ही थे। उनको मुक्तराज़ तथा महाराज़ के

वार्तालाप के दर्शन लाभ प्राप्त होता था। महाराज़ मुक्तराज़ को भेटते, बात करते, हाँथो से हावभाव करे ये दर्शन होते थे। स्वामी कई सालों से दृढ़तापूर्वक धर्म नियम का पालन करते, भगवान का भजन करते, तथापि भगवान के ऐसे अलौकिक दर्शन उन्हें नहीं हुए थे। मुक्तराज़ के प्रताप से उनको ऐसे दर्शन हुए। अतः स्वयं को धन्य मानने लगे। मुक्तराज़ की महिमा जानकर उनके साथ अति स्नेह रख्रते एवं मुक्तराज़ भी स्वामी को कीर्तन सुनाते।

साधु भक्तिजीवनदासजी स्वामी अर्थात् वे ही जिन्होने मुक्तराज़ को कंठी पहनाकर पूजा दी थी। मुक्तराज़ जब वढ़वाण पधारे, तब महाराज़ ने उनको दर्शन देकर कहा था, ये स्वामी आपको कंठी पहनाकर पूजा देंगे। मुक्तराज़ तो अनादिमुक्त थे।उनको तो श्रीजीमहाराज़ सदैव साथ ही थे, परंतु इस दुनिया की दृष्टि से स्वामी को स्वयं के कंठी गुरू के तौरपर स्वीकार किये। स्वामी ने उनको महान मुक्त जानकर कंठी पहनाकर वर्तमान (नियम) धारण करवाये तथा पूजा दी। मुक्तराज़ ने उनकी कंठी गुरू के भाव से बहुत सेवा कर उनकी प्रसन्नता प्राप्त की।

घनश्याम महाराज़ की मूर्ति इस बालमुक्त के साथ अभिनव लीलाएँ करते इसकी जानकारी आहिस्ता-आहिस्ता सभी को होने लगी।प. पू. श्री अबजीबापाश्री के कृपापात्र, डॉ. मणिलालभाई आदेशरा भी वढ़वाण में डॉक्टर का व्यवसाय करते थे। पूज्य श्री नारायणभाई के बारे में जानकर उन्हें लगा ऐसी स्थिति तो श्री हरिजी के परम लाड़ले मुक्त की ही हो सकती है। ऐसे मुक्तराज़ का लाभ हम क्यों न लें। अतः उन्होंने श्री नारायणभाई से मिलकर कहा कि, मुक्तराज़!आप तो महाराज़ से बात कर सकते है! तो मेरी ओर से इतनी प्रार्थना कीजिये कि मुझे भी उनकी दिव्य

अलौकिक मूर्ति के दर्शन दें। पूज्यश्री नारायणभाई ने कहा अच्छा कुछ देर अंतःवृत्ति करने के पश्चात मणिलालभाई से कहा कि महाराज़ आपको दर्शन देने का इन्कार करते है। यह सुनकर मणिलालभाई उदासीन हो गये तथा पुनः आजिजीपूर्वक विनंती करने को कहा। पूज्य श्री नारायणभाई ने पुनः महाराज़ से आग्रहपूर्वक प्रार्थना की। आखिरकार श्रीजीमहाराज़ ने कहा कि आज शाम को संध्या आरती के बाद जब सभी हरिभक्त मंदिर में से चले जाये, तब उन्हें मेरी मूर्ति की समक्ष बैठने को कहिये। पूज्यश्री नारायणभाई ने यह बात मणिलालभाई से कही। मणिलालभाई यह सुनकर अति प्रसन्न हुए और शाम को महाराज़ के वचनानुसार मूर्ति की समक्ष बैठ गए। मंदिर में पूज्य श्री नारायणभाई, मणिलालभाई तथा दूर बैठे श्री भक्तिजीवनदासजी स्वामी इस प्रकार तीन ही लोग थे। थोड़ी देर में घनश्याम महाराज़ ने उनका बायाँ हाथ हिलाकर मणिलालभाई को स्वयं के प्रत्यक्ष रूप के दर्शन करवाये। मणिलालभाई तो इस दर्शन से इतने रोमांचित हो गये कि मस्ती में आकर, पूज्य श्रीनारायणभाई को उठाकर नाचने लगे।

ऐसे दर्शन से मुक्तराज़ की महिमा जानकर शाकुबा की आँख की तकलीफ के समय मणिलालभाई ने सेवा की थी।

केवल मणिलालभाई ही नहीं परंतु, बापाश्री के समकालीन तथा उनकी कृपा के पात्र बने, अनेक संत-मुक्त पूज्य श्री नारायणभाई की स्थिति को समझते और दिव्यभाव रखते थे। स. गु. श्री भगवत्स्वरूपदासजी स्वामी, स. गु. श्री श्वेतवैकुंठदासजी स्वामी, स. गु. श्री केशवप्रियदासजी स्वामी, स. गु. श्री देवजीवनदासजी स्वामी, स. गु. श्री धर्मकिशोरदासजी स्वामी आदि मूली धाम के अनेक संत तथा बापाश्री के हजूरी सेवक आशाबापा, निरावरण

दृष्टि वाले मनसुखबापा, देवराज़भाई, भुराबापा, चतुरबापा, सोमचंदबापा आदि मुक्त सभी पूज्य श्री नारायणभाई के प्रति अत्यंत स्नेह रखते थे। उनमें भी स. गु. श्री भगवत्स्वरूपदासजी स्वामी तथा मनसुखबापा तो उनपर अधिक प्रसन्नता जताते थे।

दसवीं कक्षा तक मुक्तराज़ वढ़वाण में रहे। तत्पश्चात पुनः ध्रागंध्रा आये। उस समय मुक्तराज़ की उम्र करीब पंद्रह-सोलह साल की थी।

④ शैक्षणिक कार्यकाल

ध्रांगध्रा आने के पश्चात थोड़े ही समय में अचानक शाकुबा की तबियत खराब होने से पूज्य श्री नारायणभाई मेट्रिक का साल होते हुए भी एडमिशन न लेकर मातुश्री की सेवा में लगे रहे। मातुश्री की सेवा करते, समीप बैठ कर भगवान की बातें करते। इन सब बातों से मातुश्री भी धन्यता का अनुभव करतीं मुक्तराज़ से प्रार्थना करते हुए कहतीं "मेरे पूर्व के महान पूण्य कर्म होंगे, जिसके फलस्वरूप मैं आप जैसे मुक्त की माँ बनीं। मुझे बापाश्री के वचन पूर्णतः याद है। आप महान मुक्त हो और महाराज़ के संकल्प से यहाँ पधारे हैं। वढ़वाण में भूतों का मोक्ष किया था, वह भी याद है। अब मेरी इतनी ही प्रार्थना है कि मुझे महाराज़ के आखिरी सुख तक पहुँचा दीजियेगा।" मुक्तराज़ बोले "माँ आप तो महाराज़ के अति कृपापात्र हो, सारी जिंदगी भगवान को ही याद किये है, तो अब भगवान आप को छोड़ नहीं देंगे। आप भगवान का स्मरण करें एवं मूर्ति का ध्यान करें।" मातुश्री का अंत समय है ऐसा जानकर पूज्य श्री नारायणभाई ने मातुश्री को श्रीजीमहाराज़ के अलौकिक दिव्य स्वरूप का यथार्थ ज्ञान करवा कर उसमें संलग्न कर दिये। शाकुबा भी मुक्तराज़ की अलौकिक वाणी सुनकर अंतःकरण में अद्‌भूत शांति का अनुभव कर सदैव के लिये श्री हरिजी के स्वरूप में लीन हो गयीं।

मातुश्री के देहविलय के पश्चात पूज्य श्री नारायणभाई ने पढ़ाई की फिर से शुरूआत की। मेट्रिक ध्रांगध्रा से किया। उसमें

प्रथम श्रेणी से उर्तीण हुए।

तत्पश्चात भावनगर की शामलदास कॉलेज एक वर्ष पढ़कर इन्टर सायन्स प्रथम श्रेणी से पास किया। वहाँ से बी. एससी . पूर्ण करने सुरत आये। वढ़वाण के आचार्य श्री आनंदप्रसादजी महाराज़ पूज्य श्री नारायणभाई को वढ़वाण रहते थे तब से मुक्तपुरुष के रूप में जानते थे। पूज्य श्री नारायणभाई पढ़ाई में तेजस्वी होने के कारण आचार्य महाराज़ श्री ने सुरत मंदिर के स्वामी हरिजीवनदासजी पर सिफारिश पत्र लिख दिया था। उस ख़त को लेकर मुक्तराज़ सुरत पधारे। इस दौरान मुक्तराज़ पू. लीलाबेन के साथ गृहस्थजीवन में प्रवेश कर चूके थे। जिसके बारे में हम आगे जानेंगे। सुरत की एम. टी. बी . सायन्स कॉलेज में प्रवेश पाकर वहीं हॉस्टेल में रहने लगे। हॉस्टेल से मंदिर करीब चार-पाँच की. मी. दूर है, मुक्तराज़ हररोज़ सायकल पर मंदिर भोजन करने जाते। आर्थिक परिस्थिति अति दूर्बल होने के कारण मुक्तराज़ हॉस्टेल के कमरे में छिलके वाली मुँगफली रखते थे। छिलके वाली मुँगफली जल्दी खराब नहीं होती और भूख लगने पर मुँगफली और गूड़ नास्ते में खा लेते। कॉलेज में अभ्यास करने पर भी संपूर्ण सादगी से एवं अतिशय मर्यादा में रहते थे। अनजाने में भी स्त्री का कभी भी स्पर्श न हो इसका ख्याल रखते। सहज ही अंतःवृत्ति होने के कारण कक्षा में से बाहर निकलकर यहाँ-वहाँ देखते ही नहीं। महाराज़ में वृत्ति रखकर आँखों को आधी बंद रखकर ही चलते थे।

सुरत में उस समय मुक्तराज़ ने न्यूमोनिया का बुखार ग्रहण किया था। बीमारी बढ़ने के कारण हॉस्पिटल ले जाने की परिस्थिति हो गई, परंतु मुक्तराज़ ने हॉस्पिटल जाने की अनिच्छा प्रकट की, क्योंकि हॉस्पिटल में स्त्री परिचारिका उनका स्पर्श करें यह उनको

पसंद न था। अतः हॉस्टेल में ही रहे,परंतु वहाँ अकेले रहते थे और सेवा करने वाला कोई न होने के कारण एक सत्संगी भाई घनश्यामभाई ने उनको अपने घर ले जाकर मुक्तराज़ की सेवा की। इस दौरान पू. लीलाबेन आकर मुक्तराज़ को परिचर्या के लिये मुंबई ले गईं। वहाँ कुछ दिन की परिचर्या के बाद मुक्तराज़ को पाटण ले गईं। तत्पश्चात स्नेहवाले हरिभक्तों की आजिजीपूर्ण प्रार्थना सूनकर बीमारी को विदा किया। बीमारी की लीला लंबी चलने की वज़ह से बी. एससी. के अंतिम वर्ष में एडमिशन न ले सके। रिक्त समय में मुक्तराज़ ने कुछ समय नौकरी करने विचार किया।

शिक्षक की नौकरी मिलने की वज़ह से मुक्तराज़ कुछ समय पाटण में ही रहे। यहाँ की न्यू हाईस्कूल में शिक्षक के तौर पर नौकरी स्वीकार की। लंबी बीमारी जाने के कारण पू. लीलाबेन मुक्तराज़ के साथ रहने यहाँ आ गईं थी। सीमित आय में गृहस्थी बसर करनी थी, अतः मक्तराज़ ने रूगनाथ के महोल्ले में कम किराये वाला मकान किराये पर लिया। इस घर के पास वाले मकान में भूत रहते थे। स्वयं की जानकारी देने के हेतु, एकबार पू. लीलाबेन शाम के समय नित्य-नियम करतीं थी उस समय उनको रस्सी मारी। रस्सी दिखती थी, परंतु भूत नहीं दिखते थे। लीलाबेन नीडर होने के कारण डरतीं नहीं थी। मुक्तराज़ ने दया लाकर भूत का मोक्ष किया .कुछ समय के बाद गिरधारी के पाड़ा में मासिक छः रुपये किराये से दूसरा घर रखकर वहाँ रहने गये। यहाँ तो घर में ही जीन रहते थे। ये कईं प्रकार की आवाज़ करते, ताला तूटने की आवाज़,बरतन ऊपर से नीचे गिराते, ऐसी कई प्रकार की धमाल करते। मुक्तराज़ की बहन माणेकबेन को तो एकबार तो दृष्टिगोचर भी हुआ था। मुक्तराज़ जैसे अनादि मुक्त दया लाकर

ऐसे घर में रहने आये तो ही भूतों का मोक्ष हो न! इस घर के भूतों का भी मुक्तराज़ ने मोक्ष किया और घर को भूतों से मुक्त कर तीर्थरूप बनाया इस प्रकार मलिन वासना वाले जीवों का स्वयं के प्रताप से मोक्ष करते। इस बारे में ध्रांगध्रां का अन्य एक उल्लेखनीय प्रसंग यहाँ अस्थान नहीं माना जायेगा। एक बार मुक्तराज़, पू. दिवालीबा तथा पू. लीलाबेन तीनों पू. दिवालीबा के रिश्तेदार के घर से रात्रि के १२ बजे के बाद स्वयं के घर आते थे, उस समय मार्ग में काशी कूँआ आता है, वहाँ कई भूत रहते थे। गाँव में से कोई भी रात्रि के समय वहाँ नहीं जा सकता था। जैसे ही ये तीनों मुक्त निकले दिवालीबा ने कूँए पर असंख्य भूतों को देखा। मुक्तराज़ तो महाराज़ के स्वरूप में अंतःवृत्ति युक्त चलते थे। दिवालीबा ने 'नारायणभाई! देखिये' ऐसा चिल्लाकर कहा। अतः मुक्तराज़ रुक गये और भूतों पर कृपादृष्टि की तथा स्वामिनारायण स्वामिनारायण बोलकर उन सभी पर पानी छिड़का। अतः सभी भूतों का मोक्ष हुआ और उस स्थान को निर्भय बनाया। इससे गाँव सानंदाश्चार्य हुआ।

एक बार पाठशाला में उनकी कक्षा थी, उसी समय आचार्य को काम होने से मुक्तराज़ को स्वयं के कार्यालय में बुलाया। उसी समय निरीक्षक आये। पाठशाला में घूमते हुए मुक्तराज़ की कक्षा में भी गये। मुक्तराज़ की शिक्षण पद्धति से प्रभावित होकर आचार्य के कार्यालय आये। मुक्तराज़ को वहाँ बैठे देखकर, स्तब्ध हो गये। मुँह से शब्द ही नहीं निकले। आचार्य ने मुक्तराज़ की पहचान करवाते हुए कहा "ये हमारी शाला के श्रेष्ठ शिक्षक हैं एवं भगवान के महान भक्त हैं" निरीक्षक स्तब्ध हो गये थे, कहने लगे "इन्हें हम अभी कक्षा में देखकर ही आये हैं और यहाँ भी काम कर रहे

है! एक ही व्यक्ति एक समय में दो जगह पर कैसे काम कर सकती है? यह असंभव है।" ऐसा सुनकर मुक्तराज़ बोले, "आपने मुझे कक्षा में देखा होगा तो यह श्रीजीमहाराज़ ने दिखाया होगा, क्योंकि मैं तो कब से यहाँ काम कर रहा हूँ।" निरीक्षक दंग रह गये। बात सुनकर आचार्य भी मुक्तराज़ को वंदन करने लगे।

भगवान के संकल्प से यहाँ विद्यमान होते हुए उनके लाड़ले अनादि मुक्तों को भगवानके साथ स्वामी -सेवकभाव से इतनी एकता होती है कि उनके द्वारा श्रीजीमहाराज़ स्वयं ही कार्य करते है तथा कई बार इस प्रकार से उनके जैसा ही रूप धारण कर उनकी जगह पर कार्य भी करते है।

पाटण में कुछ महीने नौकरी करने के पश्चात नया साल शुरू होने से बी. एससी. का अंतिम वर्ष बाकी होने की वज़ह से भावनगर की कॉलेज में प्रवेश लिया। अंतिम वर्ष होने के कारण अतिशय मेहनत की और ई. स. १९४६ में प्रथम श्रेणी से बी. एससी. पास हुए एवं तत्पश्चात अहमदाबाद जाकर डी. टी. सी. (डिप्लोमा इन टेक्सटाइल केमेस्ट्री) की पढ़ाई की। इस लोक की दृष्टि से कहा जाने वाला अभ्यासक्रम पूर्ण किया।

५ अनोखा गृहस्थजीवन

श्रीजी संकल्प से पधारे अनादिमुक्त का एक मात्र उद्देश्य पृथ्वी पर के अधिक से अधिक जीवों का कल्याण हो यही होता है। चाहे इस उद्देश्य को त्यागी के जीवन में सार्थक करे या गृहस्थ जीवन में कोई फर्क नहीं होता है।

मुक्तराज़ सद्‌गुणी, सदाचारी, निष्कामी आदि गुणों से युक्त होने के कारण मूली के सद्‌गुरु स्वामी श्री श्वेतवैकुंठदासजी की इच्छा मुक्तराज़ को साधु करने की थी। ऐसे सद्‌गुणी, साधु हो तो सारे संप्रदाय में महाराज़ की महिमा की वृद्धि हो ऐसा उनका विचार था, परंतु मुक्तराज़ मनसुखबापा ने स्वामी से कहा "आप इनको साधु बनाने का सोच रहे है, परंतु महाराज़ की इच्छा कुछ और है। मुझे महाराज़ और बापाश्री ने दर्शन देकर कहा है, 'नारायणभाई गृहस्थ जीवन व्यतीत करे।'अतः वे गृहस्थाश्रम में रहेंगे।" महाराज़- बापा की ऐसी इच्छा जानकर स्वामी कुछ न बोल सके। ऐसे जीवन से स्त्री और पुरुष दोनों को सेवा समागम का लाभ प्राप्त हो तथा आत्यांतिक कल्याण का लाभ हो ऐसे आशय से मुक्तराज़ ने भी इस विचार की अनुमति प्रदान की।

मुक्तराज़ मनसुखबापा ने श्रीजी प्रेरणा से गृहस्थजीवन के साथी के रूप में पूज्य लीलाबेन का सूचन किया। लीलाबेन का परिवार उस समय धनिक माना जाता था। लीलाबेन कॉन्वेन्ट स्कूल में पढ़तीं थी, कहीं भी जाना होता तो मोटरकार में ही जातीं। मुक्तराज़ की आर्थिक परिस्थिति अति दूर्बल थी। इस लोक की

दृष्टि से देखा जाए तो यह रिश्ता संभव नहीं था। दोनों परिवार की आर्थिक परिस्थिति पूर्णतः विपरित थी। अतः मुक्तराज़ की लीलाबेन के साथ जब प्रथम मुलाकात हुई, तब उन्होंने स्वयं की व्यवहारिक परिस्थिति से लीलाबेन को अवगत करवाया तथा ऐसी परिस्थिति में रह सकती है या नहीं इस पर उनके विचार जाने। लीलाबेन की उम्र उस समय १३ साल की ही थी।इतनी छोटी उम्र में भी प्रभुप्रेरणा से समझदार स्त्री की तरह सुंदर उत्तर देते हुए कहा, "आप के पास एक रोटी होगी तो उसमें से मैं आधी खाऊँगी और कैसी भी परिस्थिति में भगवान का स्मरण करते हुए आनंद से रहूँगी।" महाराज़ ने जो रिश्ता तय किया हो उसमें कोई बाधा कैसे हो सकती है? लीलाबेन के ऐसे उत्तर से मुक्तराज़ प्रसन्न हुए एवं ई. स. १९४४ में लीलाबेन के साथ शादी से जूड़े। शादी की प्रथम रात्रि को ही मुक्तराज़ ने स्वयं के आदर्शो से ज्ञात करवाकर आजीवन नैष्ठिक ब्रह्मचर्य पालन करने का विचार लीलाबेन को बताया। लीलाबेन ने उसका सहर्ष स्वीकार किया। दंपति ने एकदूसरे को दिये वचन का जीवन पर्यंत पालन किया। जीवन के कई सालों तक उन्होंने घर के दरवाजे खुले ही रखे थे। धैर्य, हिंमत और एक दूसरे को सहारा और साथ सहकार देने की भावना इस दंपति में सहज़ ही प्रतीत होती थी। छोटी-बड़ी बिमारी में एक दूसरे की सहायता, कोई समस्या हो तो विचारों का आदान-प्रदान कर उसका समाधान करते। एक दूसरे को संर्पूण संतोष एवं पुष्टि देने का विशिष्ट तेज और दिव्यता दोनों के मुख पर प्रकाशित होती थी।

अनादि मुक्तों में तो ऐसे हरेक गुण सहज ही होते हैं, परंतु अन्य लोगों को उनके जीवन से प्रेरणा मिले, इसी हेतु से ऐसा वर्तन

करते है। पति-पत्नी को निज जीवन में कैसा अनुकुलन करना चाहिये, इसके लिये इन दिव्य मुक्तों का जीवन आदर्श उदाहरण स्वरूप है। सामान्य गृहस्थ का जीवन संसारी तथा आसक्तिमय होता है, जब कि इस दंपति का जीवन इससे एकदम विपरित परमार्थ के पथ पर प्रभुमय जीवन व्यतीत करते विश्व में सुप्रसिद्ध रामकृष्ण परमहंस तथा मा शारदामणिदेवी के जैसा आदर्श गृहस्थ जीवन चरितार्थ कर दिखाया।

६ आदर्श सहचारिणी

पूज्य लीलाबेन अर्थात् आदर्श नारी। संपूर्ण पतिपरायण, निष्कामी, निर्गुण, प्रेमी, सेवाभावी तथा निष्कपट, निर्मानी भी उतनी ही। उनके दर्शन करने वाले उनके मुख पर मूर्तिमंत सतीत्व के दर्शन का अवश्य ही अनुभव करते। सत्संग मंडल उनको मासी के लाड़ले नाम से संबोधित करते है। धनसंपति युक्त परिवार से आने के बावजुद मुक्तराज़ की सीमीत आय में प्रसन्नता पूर्वक रहतीं। मुक्तराज़ के वचनानुसार मितव्ययिता से जीवन जीते, तथापि कभी कोई फरियाद नहीं, परिस्थिति कैसी भी हो, सुख हो या दुःख, हरेक परिस्थिति में सदैव हँसते मुख से मुक्तराज़ के संग ही रहती। आर्थिक मुसीबत हो या भूतोंवाला घर हो, नीडर होकर साहसपूर्ण तरीके से परिस्थिति का सामना कर, मुक्तराज़ को सभी प्रकार से सहकार देतीं थी।मुक्तराज़ की पसंद- नापसंद का पूर्णरुप से ख्याल रखतीं।मुक्तराज़ को जो कार्य या चीज़ नापसंद हो उसे कभी भी नहीं करती तथा उस चीज़ को कभी भी नहीं रखतीं। कभी भी उच्च स्वर से नहीं बोलतीं, कहीं भी बाहर जाना हो, मंदिर जाना हो, तो मुक्तराज़ की अनुमति लेकर ही जातीं। स्वयं संयमी प्रकृति रखती जिसके कारण घर में अकेलीं होती तो किसी भी पुरुष को घर में प्रवेश करने नहीं देतीं। हरेक व्यक्ति के प्रति भाव एवं करुणा रखतीं। किसी को भोजन करवाती तब माता तुल्य प्रेम दिखाकर आग्रह से भोजन करवातीं। घरमें अनादि मुक्त के घर को शोभनीय स्वच्छता, सुघड़ता तथा पवित्रता रखतीं। स्वयं

के पास आने वाली हरेक छोटी - बड़ी बहनों में तथा छोटे बालक में संस्कार सिंचन करतीं। खाना बनाने सहित सभी गृहकार्य की सुंदर व्यवस्था किस प्रकार से करे, भगवान का ध्यान-भजन किस प्रकार से करें आदि हर बात प्रेम पूर्वक सिखातीं। उनके लिये मुक्तराज़ कहतें "स्त्री का आश्रम स्थापित किया हो तो लीलामासी श्रेष्ठ गृहमाता सावित हो ऐसे सभी गुण उनमें हैं।"

महाराज़मय निज़ जीवन को बनाकर मुक्तराज़ के आदर्श तथा सिद्धांतानुसार स्वयं के आदर्श एवं सिद्धांत बनाये और आदर्श सहचारिणी का अचूक उदाहरण समाज़ के समक्ष रखा।

⑦ व्यवसाय

अहमदाबाद में पूज्य श्री नारायणभाई ने व्यवसाय की शुरूआत दरियापुर स्थित प्रिमियर हाईस्कूल में टीचर के तौर पर की। प्रमाणिकता के अति आग्रही पूज्यश्री नारायणभाई ने इस शाला में उनकी अनुरूची न रहने से इस्तीफा दे दिया।

उस समय अहमदाबाद श्री स्वामिनारायम मंदिर में श्री केशवलाल कारभारी के पिताश्री व्यवस्थापक थे। उनको श्री नारायणभाई की स्थिति की थोड़ी-बहुत जानकारी थी। एक बड़ी मिल (केलिको मिल) के मालिक की पत्नी को टी. बी. हुआ था। व्यवस्थापक की मालिक के साथ जान पहचान थी, अतः पूज्य श्री नारायणभाई को सेठ के बंगले पर ले गये। सेठ ने स्वयं की पत्नी को स्वस्थ करने के लिये प्रार्थना की, तब पूज्य श्री नारायणभाई ने कहा कि मैं तो श्रीजीमहाराज़ को प्रार्थना करूँ। बीमारी मिटाना उनके हाथ में है, परंतु तब तक मैं आपको यह श्रीजीमहाराज़ की मूर्ति देता हूँ, उनकी समक्ष हररोज़ दिया करें तथा सेठानी जो कुछ भी खाये इस भगवान की मूर्ति को नैवेद्य कर ही भोजन करे, सेठ बोले अच्छा। दिव्य उपचार शुरू हुआ और कुछ ही दिनों में फल दिखने लगा। थोड़े समय में ही सेठानी बिलकुल स्वस्थ हो गईं। सेठ को पूज्य श्री नारायणभाई का गुणभाव हुआ। सेठ को जब मालूम हुआ कि पूज्य श्री नारायणभाई ने डी.टी. सी. किया है तथा नौकरी तलाश में है।तब उन्होंने अपनी ही मिल में डाइंग आसिस्टन्ट के तौर पर मासिक रू.३५० की तनख्वाह पर रखा। उस समय

पूज्य श्री नारायणभाई के ऊपरी डाइंग मास्टर मिस्टर भट्ट थे। वे डाइंग के लिये उपयोग में आते रंग की खरीदी में कमिशन लेते थे। अतः उन्होंने पूज्य श्री नारायणभाई को भी ज्यादा कमिशन देने वाली कंपनी के रंग हलके होने के बावज़ूद खरीदने को कहा। इस मुक्तराज़ के लिए तो यह बात संभव ही नहीं थी। अतः नौकरी छोड़ने का निर्धार कर घर आ रहे थे, उस समय रास्ते में सरस्वती विद्यामंडल की शाला के बाहर शिक्षक की भरती की कतार देखकर स्वयं भी कतार में खड़े हो गए एवं इन्टरव्यू में पसंद हो गए। सरस्वती विधालय में गुणयुक्तता तथा ईमानदारी की कक्षा उच्च प्रतीत होने के कारण नौकरी का स्वीकार किया। यहाँ उनकी तनख्वाह मासिक रू.६० थी तथा वार्षिक रू. ५ की वृध्धि थी। यह शाला सरसपुर विस्तार में होने के कारण घर भी वहीं किराये से लिया। शिक्षक हुए अतः वडोदरा जाकर बी. टी. (बेचलर इन टिचिंग) किया। भारत के भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री एच. एम. पटेल तथा प्रसिध्द शिक्षाकार हरभाई त्रिवेदी और रघुभाई नायक सरस्वती विद्यामंडल के मुख्य संचालक थे। पूज्य श्री नारायणभाई की कार्य-दक्षता तथा प्रशासनिक सूझ से अति प्रभावित हुए। अतः सरस्वती विद्यामंडल की ही जे.एन. बालीका विद्यालय कन्याशाला में आचार्यपद सौंप दिया। निष्ठावान तथा उच्च चारित्रवान आचार्य के तौर पर सेवा कर पूज्य श्री नारायणभाई ने उच्च आदर्श स्थापित किये। सहकार्यकर तथा विद्यार्थी मुक्तराज़ को केवल आदर्श आचार्य ही नहीं, वरन् एक महान संत के तौर पर भी आदर करते थे। कोई भी कार्य करने से पहले वे मुक्तराज़ के आशीर्वाद लेने आते। मुक्तराज़ भी स्टाफ के सभ्य का परिवार के सभ्य की तरह जतन करते। दयालू स्वभाव होते हुए भी वे सत्यनिष्ठा,

ईमानदारी, चारित्रशीलता एवं कठीन अनुशासन के आग्रही थे। पढ़ाई के साथ अध्यात्म की बात हो, तथापि विद्यार्थी को विषय पढ़ने का उत्साह अविरत रहे, मुक्तराज़ में समझाने की ऐसी कला थी।

हरेक विद्यार्थी मर्यादा में रहकर ही वर्तन करे, इसका ख्याल वे रखते। उनकी उपस्थिति में कोई भी मर्यादा से बाहर वर्तन नहीं कर सकता था। ऐसा उनका प्रभाव था। शिस्तपालन के साथ विद्यार्थी नीडर और साहसिक हो, यह ख्याल भी मुक्तराज़ रखते थे। एक बार पर्यटन में गये थे, उस समय गाँव में कहीं भी रहने की व्यवस्था न मिलने पर विद्यार्थीओं को कब्रिस्तान में ले गये और कहा "जैसे ये सभी सोये है। वैसे ही हम भी भगवान का नाम लेकर बिना डरे सो जाएं। भगवान किसी को कुछ भी नहीं होने देंगे। हिंमत रखकर सभी सो जाएं।" विद्यार्थी मुक्तराज़ का संत के तौर पर आदर करते थे, अतः उनके वचन में विश्वास रखकर, भगवान का नाम लेकर निर्भय होकर सभी सो गये। मुक्तराज़ विद्यार्थी को नीडर, हिंमतवान बनने को कहते और उनका सर्वांगी विकास हो। ऐसा आयोजन भी करते थे।

शाला में हरेक जीव का कल्याण हो और चारों ओर प्रभु की दिव्यता प्रसारित हो इस हेतु से मुक्तराज़ पानी की टंकी में चरणरज़ डलवाते तथा हरेक व्यक्ति उस पानी का उपयोग करें ऐसा आग्रह करते। उनके शैक्षणिक कार्यकाल के दौरान उनके रिसर्च पेपर ' मोडर्न एज्युकेशन थियरी विथ रिस्पेक्ट टू टिचिंग'को राष्ट्रीय एर्वार्ड भी एनायत हुआ था।

संपूर्ण नितिवान रहकर स्वयं के आदर्श एवं सिद्धांत के अनुसार ही कार्य कर ई. स. १९७७ में मुक्तराज़ ने स्वैच्छिक

निवृत्ति ली। ट्रस्ट के सभ्य ने मुक्तराज़ को अधिक समय तक संचालन करने की विनंती की, परंतु मुक्तराज़ के मन में अब आध्यात्मिक कार्य की ओर अधिक ध्यान देने का विचार होने के कारण ट्रस्ट के सभ्य को प्रेम पूर्वक इन्कार कर दिया। मुक्तराज़ निवृत्त हुए उस समय शाला के सभी सभ्यों के मन खिन्न एवं नेत्र सजल थे।वे जानते थे, सभी का ख्याल रखने वाले प्रेमी आचार्य उन्हें अब कभी नहीं मिलेंगे। करीब २९ से ३० साल तक शिक्षा क्षेत्र में सेवा देकर अनेक के जीवन बनाये।

मुक्तराज़ के हाथों तले पढ़े अनेक विद्यार्थी, जीवन के विविध क्षेत्र में उच्च पद पर पहुँचे है। सालों के बाद उनमें से किसी का मिलन अचानक ही मुक्तराज़ से हो जाये तो प्रणाम कर कहते, साहब हम जो भी है आपके ही मार्गदर्शन, शिक्षा तथा शुभाशीर्वाद का परिणाम है। आप ने तो हमारे जीवन को ही पलट दिया है। ऐसे उदाहरण दिखाते है कि मुक्तराज़ का शिक्षण क्षेत्र में कैसा अपूर्व योगदान था।

८ आध्यात्मिक दव्य जीवन

मुक्तराज़ का समग्र जीवन आध्यात्मिक तथा दिव्य था। उनका हरेक कार्य, वाणी, वर्तन, क्रिया, आध्यात्मिक ही था। अखंड अंतःवृत्ति उनको सहज ही थी। वे अखंड ध्यान में ही रहते थे। हरेक कार्य प्रभु के स्वरूप में वृत्ति रखकर करते। अनादि मुक्त में रहकर तो भगवान स्वयं ही कार्य करते है और मुक्त प्रभु के सुख में सदैव अखंड निमग्न रहते है, तथापि मुक्तराज़ जीवों की शिक्षा के हेतु हरेक कार्य करते और जीवों को सिखाते कि किस प्रकार अखंड तेल धारावत् वृत्ति भगवान में रखें और भगवान में वृत्ति रखकर किस प्रकार हरेक कार्य संपूर्ण सावधानी पूर्वक करें। यह स्वयं के वर्तन से सिखाते थे।

स्वयं स्वतंत्र अनादिमुक्त थे। अन्य जीवों की तरह उनको सेवा-भक्ति द्वारा स्वयं के चैतन्य के उत्कर्ष की आवश्यकता न थी। तथापि इस लोक की दृष्टि से इस लोक में पधारे थे, अतः इस लोक की रीति अनुसार सद्गुरु श्री भगवत्स्वरूपदासजी स्वामी तथा सद्गुरु श्री वृंदावनदासजी स्वामी को स्वयं के गुरु के रूप में स्वीकार किया था।

सद्गुरु श्री भगवत्स्वरूपदासजी स्वामी ने भी मुक्तराज़ को कंठी बाँधकर नियम धारण करवाये थे। मुक्तराज़ छोटे थे तब महाराज़ के प्रताप तथा महिमा की कई बातें स्वामी करते। ये सद्गुरु महासमर्थ थे। तीनों अवस्था में भगवान की मूर्ति अखंड दृष्टिकृत करते थे। उनको वचनामृत शब्दशः कंठस्थ था। वे आम,

केले, चीकु आदि फल प्रतिमा स्वरूप को भोग लगाते उसे महाराज़ प्रतिमा स्वरूप में से प्रकट होकर प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण करते। बापाश्री ने उनको व्यतिरेक मूर्ति का साक्षात्कार छपैया मंदिर में करवाया था। तत्पश्चात वे सदैव उस मूर्ति के दिव्य सुख को भोगते थे। ऐसे महासमर्थ सद्‌गुरु मुक्तराज़ के गुरु थे। उन्होंने जब अंतिम बीमारी ग्रहण की तब मुक्तराज़ ने स्वामीश्री की अंतःकरण पूर्वक दिव्यभाव से सेवा की। संत एवं हरिभक्तों ने मुक्तराज़ से कहा "सभी के संतोष खातिर आप समाधि कर महाराज़ से पूछिये कि स्वामीश्री को कब धाम में ले जायेंगे?" मुक्तराज़ ने समाधि कर महाराज़ से अंतःवृत्ति से पूछकर कहा, "चार बज़े महाराज़ स्वामी श्री को ले जायेंगे" उसी प्रकार महाराज़ सद्‌गुरु श्री को सुबह चार बज़े ले गये और मूर्ति के सुख में सुखी कर दिये। उस समय महाराज़ ने सद्‌गुरु द्वारा देह भाव दिखाये और मुक्तराज़ ने स्वामीश्री की अंतिम समय में श्रद्धापूर्वक सेवा की। जीवों को सिखाया कि निज गुरु को स्वयं के आत्मिय जन से भी अधिक मानकर, भगवान की सेवा मानकर करें। महासमर्थ सद्‌गुरुश्री की दिव्यभाव से सेवा कर मुक्तराज़ ने उनकी प्रसन्नता प्राप्त की। घ्रांगध्रा भोगावो नदी के पास स्वामीश्री की देरी (याद में बनाया चबूतरा जैसा) है। आज भी श्रद्धा सहित वहाँ जाकर अगर कोई शुभ संकल्प करता है तो उसके संकल्प सिद्ध होते है।

अनादि मुक्त पूर्ण ही होते है। वे अखंड महाराज़ की मूर्ति के रोम-रोम का सुख भोगते है, अतः उनको उस सुख के ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है। तथापि इस लोक में सद्‌गुरु स्वामी श्री वृंदावनदासजी स्वामी को स्वयं के ज्ञानगुरु के तौर पर स्वीकार किये।

स्वामीश्री भगवत्स्वरूपदासजी ने एक बार मुक्तराज़ को सद्गुरु स्वामी श्री ईश्वरचरणदासजी बीमार होने के कारण एकबार उनके दर्शन कर आने को कहा। मुक्तराज़ तथा उनके भाई डॉ. अमृतलालभाई दोनों स्वामी के दर्शन को अहमदाबाद वाडज में चांपानेर सोसायटी में एक हरिभक्त के मकान में गये। स्वामी श्री के दर्शन कर रात्रि वहीं रुके। सुबह भोर के समय छत पर से नीचे चौगान में स्वामी श्री तंदुरस्त हो और घूम रहे हो ऐसे दर्शन दोनों भाईयों को हुए। नीचे आकर देखा तो स्वामी श्री बिछाने पर थे। इस प्रकार उन्होंने यह दृष्टिकृत करवाया कि बीमारी दिखावा मात्र है; वह मुक्तों को अवरोधक नहीं है। उन्होंने मुक्तराज़ को करीब बुलाकर कान में कहा "मुझ से बोला नहीं जायेगा।आप सद्गुरु वृंदावनदासजी के पास जाए वे आपको अंतिम नियम समझायेंगे।" मुक्तराज़ सद्गुरु स्वामी श्री वृंदावनदासजी के पास गये। स्वामी के यह पूछने पर कि अंतिम नियम के बारेमें जानते है? मुक्तराज़ ने हाँ कहकर कहा "मुझे पता है, इसमें क्या? मुझे तो अखंड महाराज़ की मूर्ति के दर्शन होते है और सुख भी आता है।" वृंदावनदासजी स्वामी मर्मपूर्वक हँसकर बोले, "अभी तो समुद्र के जल में पैर की एड़ी ही डूबी है और पानी में छपछपा रहें है। उसमें इतना आनंद! सुख के महासागर में डूबकी लगाने पर पता चलेगा।" ऐसा कहकर अनादि मुक्त की स्थिति समझायी एवं प्रतिलोम ध्यान करवाकर महाराज़ के दिव्य साक्षात्कार दर्शन करवाये। पश्चात बोले, "इसे अंतिम नियम कहा जाता है।" मुक्तराज़ की तो प्रथम से ही ऐसी दिव्य स्थिति थी। वे अखंड ऐसे दर्शन करते ही थे, तथापि स्वामी ने जब उनको दिव्य दर्शन करवाये तब अति प्रसन्न हुए। स्वामीश्री ने दर्शन करवाये उससे पहले स्वयं किसी को यह

नहीं जताते थे, परंतु इसके पश्चात तो सभी को ज्ञात हो गया कि मुक्तराज़ की सदैव ऐसी अलौकिक स्थिति रहती है।

९ अलौकिक मुक्तमंडल

मुक्तराज़ पृथ्वी पर पधारें तब पृथ्वी पर स्थितिवाले कई हरिभक्त एवं संत थे। जो उम्र में मुक्तराज़ से बड़े होते हुए भी मुक्तराज़ की दिव्य स्थिति जानकर उनकी महिमा जानते थे। हरिभक्तों में अ. मु. सोमचंदबापा, अ. मु. मनसुखबापा, अ. मु. चतुरबापा, अ. मु. आशाबापा तथा पू. दिवालीबा आदि मुक्त मंडल थे। जो मुक्तराज़ को पहचानते और उनकी महिमा जानते थे। कई बार कोई कार्य करना हो तो मुक्तराज़ की सलाह लेकर महाराज़ की क्या मरज़ी है, यह उनके पास से जानने के पश्चात कार्य करते। अन्य जीवों को मुक्तराज़ की पहचान करवाते और उनको मुक्तराज़ की महिमा कहकर मुक्तराज़ के साथ स्नेह रखने को कहते। अ. मु. सोमचंदबापा और पू. दिवालीबा तो लंबे समय तक मुक्तराज़ के संपर्क में थे।

संतमंडल में बड़े-बड़े सद्गुरु भी मुक्तराज़ की महिमा जानते। अ. मु. सद्गुरु मुनिस्वामी, अ. मु. श्वेतवैकुंठदासजी स्वामी, अ. मु. भगवत्स्वरूपदासजी स्वामी, अ.मु. देवजीवनदासजी स्वामी,अ. मु. वृंदावनदासजी स्वामी अ. मु. धर्मकिशोरदासजी स्वामी, अ. मु. भक्तिजीवनदासजी स्वामी आदि कई संत इस मुक्तराज़ की महिमा जानते एवं उनके दर्शन करने आने वाले को मुक्तराज़ का योग-समागम कर प्रसन्नता तथा आत्यंतिक मोक्ष के आर्शीवाद प्राप्त करने की सलाह देते। विशेष कर स. गु. देवजीवनजीवनदासजी स्वामी ने तो अनेक को मुक्तराज़ की महिमा समझाकर उनके पास

भेजकर इस लोक तथा परलोक दोनों में सुखी करवाये थे।

अ. मु. मुनिस्वामी ने १९७४ में अंतिम बीमारी ग्रहण की उस समय उन्होंने हरिभक्तों को सलाह दी थी कि अब आप सब अ. मु. प. पू. नारायणभाई का योग-समागम-सेवा किजियेगा। वे अति समर्थ है। सरल दिखते है, परंतु महाराज़ के अनादिमुक्त है। वे सारे सत्संग को संभालेंगे, वास्तविक रूप से मुक्तराज़ ने एक आदर्श माँ की तरह सारे सत्संग को संभाल लिया। यह सर्व विदित है।

अ. मु. भक्तिजीवनदासजी स्वामी ने मुक्तराज़ को वढ़वाण में कंठी धारण करवाई थी। तत्पश्चात बहुत समय के बाद जब मुक्तराज़ वढ़वाण पधारे, तब स्वामी ने मुक्तराज़ को पहचाना और अति प्रसन्न हुए। मुक्तराज़ अबजी बापाश्री के मत में मिल गये है ऐसा स्वामी ने सुना था। अतः स्वामी मुक्तराज़ को समीप बैठाकर कहने लगे "यह सब मिथ्या है, आप इसमें कहाँ फँसे?" मुक्तराज़ ने स्वामी से कहा "महाराज़ ने कभी आपको दर्शन दिये है? बाते की है? मेरे साथ तो प्रभुजी अखंड रहते है, मेरे साथ बाते करते और स्नेह जताते इसके आप साक्षी है। तो वे प्रभुजी मुझे यहाँ-वहाँ कैसे फँसने देंगे?" ऐसा कहकर मुक्तराज़ ने महाराज़ तथा बापाश्री की जैसी है, वैसी महिमा स्वामी को समझाई। स्वामी अति प्रसन्न हुए और बोले "वैसे तो मैं आपका दीक्षागुरु हूँ,परंतु आज आप मेरे वास्तविक गुरु के तौर पर आये और मेरा अज्ञान टालकर मुझे निहाल कर दिया।" इस प्रकार वे भी मुक्तराज़ की अत्यंत महिमा जानने लगे।

ऐसे हरिभक्त तथा संतमुक्तों का अलौकिक मंडल मुक्तराज़ की महिमा जानकर स्नेह रखते थे, मुक्तराज़ भी इस संत मंडल की

बार-बार सेवा कर उनकी प्रसन्नता पाते। संतपुरूषो के प्रति किस प्रकार दिव्यभाव रखे, किस प्रकार उनका आदर करना, उनका योग-समागम करने में कैसा विवेक रखना, तन-मन-धन से सेवा-शुश्रूषा किस प्रकार संकल्प रहित होकर करें आदि स्वयं दृष्टांत द्वारा मुमुक्षु को सिखाते थे।

(१०) श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन की स्थापना

मुक्तराज़ सरसपुर तलिया के मोहल्ले में रहते थे। वहाँ से ई. स. १९६७ के जनवरी महिने में सर्वमंगल सोसायटी में रहने आये। सोसायटी में घर के लिये ड्रो किया, उसमें सर्व सत्संग में अग्रगण्य मुक्तराज़ को एक नंबर का घर मिला। सर्वमंगल में रहने आये तब से मुक्तराज़ के मन में सर्वजीवहितावह तथा सर्वमंगल कार्य करने की इच्छा थी। स्वयं ऐसे कार्य छोटे पैमाने पर तो करते ही थे, परंतु उनके संकल्प के अनुसार साकार स्वरूप तो थोड़े सालों के बाद प्रदान किया।

ई. स. १९७७ में स्वैच्छिक निवृति के बाद मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई के मन में सर्व जीवहितावह तथा सर्वमंगल कार्य करने का संकल्प था। स्वयं छोटे पैमाने पर ऐसे कार्य तो करते ही थे, परंतु मुक्तराज़ को समग्र जनसमुदाय के लिये विशेष कुछ करने की इच्छा थी, जिसमें जीवन उत्कर्ष में विकास लक्षी कार्य, जिसके भीतर सामाजिक, शैक्षणिक, आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ सदैव चलती रहे एवं जीवों का ऊर्ध्वीकरण होता रहे। इसके लिये एक संस्था स्थापित करने का मुक्तराज़ का विचार था। मन के विचार श्रीजीमहाराज़ के समक्ष प्रकट करने वे कालपुर स्वामिनारायण मंदिर रंगमहोल के घनश्याम महाराज़ के दर्शन करने गये। वहीं महाराज़ की प्रत्यक्ष प्रेरणा हुई तथा महाराज़ ने आर्शीवाद दिये। महाराज़ ने स्वयं संस्था का नाम भी सूचित किया। ' श्री स्वामिनारायण

डिवाइन मिशन' ऐसा दिव्यरूप से लिखकर स्वयं के दिव्य हस्ताक्षर में अनुमति की मुहर भी लगा दी। महाराज़ की ओर से अनुमोदन मिलने से मुक्तराज़ को अति प्रसन्नता हुई और ८ अक्तूबर ई. स. १९८१ विजया दशमी के शुभ दिन मुक्तराज़ ने श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन की स्थापना की। सत्संग समाज में प्रतिष्ठित, साधन-संपन्न, आगेवान और श्री स्वामिनारायण भगवान में अनन्य निष्ठा वाले तथा मुक्तराज़ श्री नारायणभाई में स्नेह रुचि रखने वाले हरिभक्तों का संस्था के ट्रस्टी के तौरपर मंडल बनाकर चॅरिटी कमिश्नरश्री की कचहरी में रजिस्ट्रेशन करवाया गया निष्काम, निर्मान, निर्लोभ, निःस्वार्थ आदि साधुता के गुणों से अभिभुत,संतविभुति पूज्य श्री नारायणभाई को सत्संग समाज़ ने संस्था के आजीवन प्रमुख के तौरपर स्थापित किये। संस्था के विकासलक्षी कार्यो में चंदा लिखवाने की शुरूआत पूज्य श्री नारायणभाई द्वारा हुई। तत्पश्चात उनकी प्रेरणा लेकर धीरे-धीरे अन्य दाता भी सक्रिय होने लगे। मिशन में चंदा के लिये मुक्तराज़ ने कभी किसी के समक्ष हाथ नहीं फैलाया। दाता स्वेच्छा से मिशन की कल्याणकारी प्रवृत्ति को देखकर तन,मन, धन से सेवा करने आर्कषित हुए। श्रीजीमहाराज़ की प्रेरणा एवं मुक्तराज़ के बलवान संकल्प से शुभ संस्कारों वाले प्रतिष्ठित एवं शिक्षित हरिभक्तों का एक वर्ग भी मुक्तराज़ के मार्गदर्शन तले स्वामिनारायण डिवाइन मिशन को सेवा अर्पण करने तैयार हुआ और सर्वजीवहितावह कार्यो का सदाव्रत शुरु हुआ।

प्रयोजन एवं उद्देश्य

मिशन की स्थापना करते समय ही मुक्तराज़ ने उसके उच्च प्रयोजन, आदर्श उद्देश्य तथा मिशन की प्रवृत्ति के लिये सुंदर ढ़ाँचा

तैयार किया था। जिससे सुव्यवस्थित तौर पर अविरत रूप से कार्य प्रवाह चालू रहे। इस मिशन ट्रस्ट में भगवान स्वामिनारायण के सर्वजीवहितावह सिद्धांतानुसार मानव कल्याण की प्रवृत्तियों का आरंभ किया। जिसके द्वारा सुंदर चारित्र रचना हो कर जीवन का सर्वोच्च ध्येय प्रभु प्राप्ति तथा आत्यांतिक कल्याण हो, ऐसा उच्च प्रयोजन मिशन की स्थापना में अभिप्रेत है।

उद्देश्य

स्वामिनारायण भगवान के सर्वजीवहितावह संदेशानुसार मानव जात के श्रेय और प्रेय के हेतु –

(क) सेवा-सदाव्रत के आदर्शानुसार भेदभाव के बिना आर्थिक चिन्ता का अनुभव करने वाले भाई - बहन को आवश्यक सहायता पहुँचाना।

(ख) आरोग्यप्रसार की मार्गदर्शक व्यवस्था तथा रोगोपचार के परिचर्या केन्द्र - औषधालय की स्थापना – परिवहन करना अथवा ऐसे कार्य करने वाली संस्था को सहायरूप होना।

(ग) आत्मिक शांति और मानवता की सुगंध फैलाने वाले मंदिर, सत्पुरूष के स्मारक केन्द्र आदि का निर्माण-परिवहन-विकास करना।

(घ) जीवन रचना में उपयोगी साहित्य और कला के विकास कार्य को प्रेरणा देना।

(च) सम्यक् अभ्यास हेतु पुस्तकालय, संग्रहालय, संशोधन केन्द्रों की स्थापना परिवहन या ऐसी ईकाई को सहायता करना।

(छ) सर्व समन्वय हो ऐसे सांस्कारिक तथा तत्त्व ज्ञान विषयक प्रकाशन प्रसिद्ध करना एवं उसके द्वारा जनसमुदाय के ऊर्ध्वगामी विकास में सहायक होना ;

और इस प्रकार :

(१) सामाजिक जीवन की आधारशीला तुल्य सदाचार तथा नीति की कक्षा बलवान हो ऐसी प्रवृत्ति का आयोजन करना।

(२) समाज में मेल, एकता और आपसी सुहृदयभाव की वृद्धि हो, विश्वबंधुत्व की भावना का विकास हो एवं विसंवादिता दूर हो ऐसे कार्यक्रम देना।

(३) विश्व के धर्म तथा पक्षो के बीच संवादिता विद्यमान रहे इस हेतु से सर्वधर्मीय परिषदों का आयोजन करते हुए आध्यात्मिक तथा सामाजिक उत्कर्ष को गति देना।

ऐसे सुआयोजित कार्यक्रम एवं प्रवृत्ति द्वारा परिपूर्ण भगवत्स्वरूप की प्राप्ति की ओर जनसमुदाय ऊर्ध्वगामी विकास कर गतिमान हो, ऐसा मिशन का शुभ आशय है।

संस्था का आर्थिक एवं संचालन का ढ़ाँचा सुव्यवस्थित तरीके से चलता रहे, अतः सेवाभावी कार्यकरों को योग्यतानुसार कार्य सौंपा गया। दि.११-६-१९८२ को इन्कमटेक्स रजिस्ट्रेशन करवाया।

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन संस्था सर्वधर्म समन्वयकारी और सर्वजीवहितावह उद्देश्य सरलता से सार्थक हो तथा मिशन की प्रवृत्तियाँ अविरत चलती रहे, इस उद्देश्य से इन्कमटेक्स एक्झम्पशन प्राप्त करने का विचार किया। उस समय एक उल्लेखनीय प्रसंग हुआ। अधिकारीश्री की समक्ष इन्कमटेक्स एक्झम्पशन का प्रस्ताव रखा, तब उन्होंने मुक्तराज़ नारायणभाई से कहा "आपके ट्रस्ट के उद्देश्य बहुत ही अच्छे है, परंतु ट्रस्ट के नाम में 'श्री स्वामिनारायण'नाम आता है, उसे बदल कर अन्य नाम रखें, क्योंकि सार्वजनिक उद्देश्य की संस्था में सांप्रदायिकता योग्य नहीं, अतः हम इन्कमटेक्स माफी नहीं दे सकते।" पूज्यश्री नारायणभाई ने भगवान स्वामिनारायण

का संक्षिप्त परिचय देकर अधिकारी श्री को विनम्रभाव से कहा "साहब, ये परम कृपालु परमात्मा तो इस संस्था की आत्मा है। इस आत्मा के बिना संस्था रूपी शरीर की कोई किंमत ही नहीं है। Body without soul has no value at all. स्वामिनारायण नाम कोई सांप्रदायिक नाम नहीं है। यह अनंत विश्व की आत्मा, ऐसे पूर्ण पुरुषोत्तम परमात्मा का दिव्य नाम है। इस नाम में से बहती प्राण शक्ति के स्त्रोत से समग्र विश्व का नियमन और संचालन होता है। हमारी संस्था के प्राण तथा संस्था की कल्याणकारी प्रवृत्तियों के यह परमात्मा केन्द्र बिंदु हैं।" यह विधान सुनकर अधिकारी श्री प्रभावित होकर मुक्तराज़ की बात से सहमत हो गए और दि.२९-६-१९८२ को 'Income Tax Exemption 80 G (5) from 8-10-1981 to 31-3-1983' का सर्टिफिकेट दिया।

पूज्य श्री नारायणभाई के मार्गदर्शन के अंर्तगत संस्था के उद्देश्यानुसार प्रवृत्तियाँ सुंदर तरीके से चलती ज्ञात होने से, इन्कमटेक्स अधिकारीश्री की ओर से इन्कमटेक्स एक्झमशन बार-बार मिलता रहा जो आज भी चालू ही है, जो संस्था की मानवकल्याण की प्रवृत्तियों का संचालन सुंदर तरीके से हो रहा है, यह साबित करता है। दाताश्री इस बात से प्रोत्साहित होते गए और दान प्रवाह अधिकाधिक गतिमान होता गया जो संस्था के लिये गौरव की बात है।

जमा पूँजी की व्यवस्थित व्यवस्था कर अलग-अलग बैंक में खाते खुलवाये। जमाराशि रखी, जिसके ब्याज से मिशन की प्रवृत्तियाँ चलती रहे।

प्रवृत्तियाँ

"जिस तालाब में पानी की छोटी सी परंतु अविरत धारा

बहती हो, वह तालाब कभी भी सुखता नहीं है, जब कि बड़ी-बड़ी नदियाँ भी कालांतर में सुख जाती है।"

- परम पूज्य बापाश्री

अ. मु. प. पू. श्री नारायणभाई द्वारा व्यवस्थित की गई श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन की कार्य पद्धति में उर्पयुक्त सिद्धांत को ही केंद्र बिंदु में रखा गया है। मुक्तराज़ के मार्गदर्शन तले मिशन की विविधलक्षी प्रवृत्तियाँ शुरू हुई, उसकी झाँकी करते हैं।

आध्यात्मिक प्रवृत्ति

ई. स. १९८४ में सर्वमंगल सोसायटी में ही टेनामेंट नं. ८ यानि कि संस्था के प्रथम मकान की खरीदी की गई। इस मकान के नीचे के हिस्से में कार्यालय शुरू हुआ और साधक खंड़ तथा रसोईघर उसमें ही साधक को रहने के लिये प्रदान किये गये। ज्ञान-ध्यान-उपासना आदि जीवन के आंतरिक विकास की प्रवृत्तियाँ के लिये योग्य स्थान की आवश्यकता लगने पर टेनामेंट नं. ८ के उपर ई,स. १९८५ में पुरूषों के लिये प्रार्थना खंड बनाया गया। इससे पूर्व यह प्रवृत्तियाँ मुक्तराज़ के घर की उपरी मंज़िल पर ही चलती थी।

शुरू में स्त्रियों की सत्संग सभा मकान नं. ८ के ग्राउन्ड फ्लोर में होती थी। दिन-प्रतिदिन भाविक स्त्रियों की संख्या बढ़ने से मकान नं. २० की उपरी मंझील खरीदी। तत्पश्चात उसी मकान का ग्राउन्ड फ्लोर खरीदकर, उसका जिर्णोद्धार कर उसे स्त्रियों के सभाखंड में रूपांतरित किया गया। जिससे अधिकाधिक स्त्रियों को सत्संग सभा का विशालता से लाभ प्राप्त हो। इस सभा खंड में श्री घनश्याम महाराज़ की पूर्ण कद की प्रतिमा का अति सुंदर भव्य

स्वरूप की प्रतिष्ठा की गई। घनश्याम महाराज़ का यह स्वरूप मूली में अनादिमुक्त स.गु. श्री ब्रह्मानंद स्वामी के शिष्य अनादिमुक्त स. गु. श्री हरिनारायणदासजी स्वामी ने तैयार करवाया था। किसी कारण से इस स्वरूप की प्रतिष्ठा मूली मंदिर में न हो सकी और सालों तक रखा हुआ था।

ज्ञान-ध्यान-उपासना केन्द्र जिसमें नियमित तौर पर हरिभक्त इकठ्ठे होकर प्रभु का ध्यान, आरती-धून, कीर्तन -भजन, कथा-वार्ता आदि आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ कर स्वयं का उत्कर्ष करने का प्रयत्न करते है। इसके अलावा हर महिने के अंतिम रविवार को मुक्तराज़ ने सभा का आयोजन किया जिसमें कोई भी व्यक्ति आ सके। यहाँ आकर वे आध्यात्मिक बात में अपनी समझ को पेश करे तथा स्वयं को समझ में न आती बात के बारे में अन्य के पास से समझ प्राप्त करे। इस कार्यक्रम में बालक भी सहभागी हो ऐसा आयोजन मुक्तराज़ करते, जिससे उनमें छूपी विविध कला तथा शक्ति का विकास हो। सभा के अंत में मुक्तराज़ स्वयं कृपाकर सभा को संबोधित करते एवं प्रवचन करते, जिसमें बिना प्रश्न पूछे ही अपने आप हरेक की उलझन दूर हो जाती। किसी को आध्यात्मिक बात में कोई उलझन हो तो वह भी सुलझ जाती। आर्शीवचनों बरसाते जिससे जीवों का ऊर्ध्वीकरण होता। उनकी वाणी में धर्म, भक्ति, ध्यान, स्वरूप चिंतन, उपासना, समग्र जीवन को योगमय बनाकर दिव्य जीवन जीने की कला तथा वचनामृत, बापाश्री की बातें आदि में स्थित ज्ञान गांभीर्य, धर्मशुद्धि, संचालनशुद्धि आदि विविध पहलु सहजता से प्रवाहित होते। सभा में उनकी बात करने की शैली सुमधुर, स्पष्ट, एवं हृदय स्पर्शी थी। उनकी वाणी का प्रभाव ऐसा था कि उनकी वाणी प्रवाहित होती हो उस समय कोई

अपना स्थान छोड़ नहीं सकता था। रविवार की सभा का मुख्य आकर्षण ही मुक्तराज़ का रहता –उनकी वाणी, उनका दर्शन। भक्तगण को भी इस सभा का अति दिव्यभाव रहता। कोई बीमार हो, धाम में गया हो या अन्य कोई मुसीबत हो, उस समय मुक्तराज़ को सभा में प्रार्थना करने कहते। मुक्तराज़ भी उनकी प्रार्थना सुनकर बीमार हो वे स्वस्थ हो जाए, धाम में गये हो वे अधिकाधिक श्रीजी सुखकी प्राप्ति करें, ऐसी सभा के पास प्रार्थना करते एवं स्वयं शुभ संकल्प करते।

सभा में भी श्रीजीमहाराज़ की आज्ञानुसार पुरुष एवं स्त्री की धर्ममर्यादा का सहज तौर पर जतन हो इस कारण पुरुष एवं स्त्री के खंड प्रथम से ही अलग तैयार करवाकर, सुंदर मूर्तियों की स्थापना की और ऐसे नियम बनाये कि स्त्री के खंड में स्त्री दर्शन करतीं हो उस समय पुरुष दर्शन करने न जाए तथा पुरुष के खंड में पुरुष दर्शन करते हो उस समय स्त्री दर्शन करने न जाए। सत्संग समुदाय बढ़ने से खंड छोटे पड़ने लगे। मिशन की विकसित होती प्रवृत्ति से आर्कषित होकर सर्वमंगल सोसायटी में रहते एक संपत्तिवान एवं निष्ठावान हरिभक्त ने स्वयम का टेनामेन्ट नं ७ संस्था को अर्पण किया। जो संस्था के लिये गौरव की बात है। उस मकान को टेनामेन्ट नं ८ के साथ साथ सम्मिलित कर उपर पुरुषों के लिये एवं नीचे स्त्रियों के लिये बड़े खंड तैयार करवाये। जिससे अधिक लोग लाभ ले सकें।

पूज्य श्री नारायणभाई के अमृतोत्सव निमित्त से आयोजित श्री हरि कृपा वर्षा ब्रह्मयज्ञ दिनांक २७-२-९७ के दिन पुरुष तथा स्त्री के खंड में सरसपुर के वयोवृध्द पवित्र संतमूर्ति स. गु. श्री हरिजीवनदासजी स्वामी को साथ रखकर पूज्य श्रीनारायणभाई

ने प्रभु के अतिशय सुंदर एवं चित्ताकर्षक स्वरूप की प्रतिष्ठा की। स्त्रियों के सभाखंड में पहले के सभाखंड में प्रतिष्ठित घनश्याम महाराज़ की पूर्ण कद की भव्य मूर्ति तथा बालस्वरूप घनश्याम महाराज़ की छोटी मूर्ति की प्रतिष्ठा की और आशीर्वाद दिये। "इस स्थान में आकर ध्यान, भजन, कथा-वार्ता, उपासना करनेवाले के अंतःकरण में अलौकिक सुख-शांति की अनुभूति तथा आत्यांतिक कल्याण होगा।भगवान के इस प्रतिमा स्वरूप के समक्ष गद्‌गदित कंठ से, सच्चे भाव से की गई प्रार्थना श्रीजीमहाराज़ अवश्य ही सुनेंगे और उसके शुभ मनोरथ पूर्ण होंगे।" ऐसे अनुपम आशीर्वाद के कारण मिशन संस्था श्रीजीमहाराज़ के कृपाप्रसाद से चिरकालीन अमृत सरिता बनी है।

सभाखंडो में श्रीजीमहाराज़ के समकालीन संतो के तथा बापाश्री के समकालीन सद्‌गुरु के प्रेरणादायी प्रतिमा स्वरूप भी स्थापित किये। जिससे उन्के स्मरण से जीवों को उनके कल्याणकारी गुणों को स्वयं के जीवन में उतारने की प्रेरणा मिले।आज भी अनेक लोग इन मूर्तियों के दर्शन कर दिन की शुभ शुरूआत करते है। कोई व्यवहारिक मुसीबत हो, कोई बीमार हो या अन्य किसी उलझन में इन मूर्ति के समक्ष गद्‌गद् कंठ से सच्चेभाव से प्रार्थना करने से उलझन दूर होने की अनुभूति अनेक जन को होती है।

ई. स. १९९३ के ऑगस्ट मास में मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई श्रीजीमहाराज़ की प्रत्यक्ष प्रेरणा से अनेक जीवों के आत्यांतिक कल्याण के संकल्प के साथ श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन के सर्वधर्म समन्वयकारी तथा सर्वजीवहितावह उद्देश्यों को विदेश में स्थित हरिभक्तों को पहुँचाने मिशन संस्था के प्रभावक प्रतिनिधि के तौर पर विदेश यात्रा पर गये। लंडन तथा अमेरिका के विविध

राज्यों में बसे हरिभक्तों को लाभ देकर अपनी यात्रा को पूर्ण कर दि.२१-११-१९९३ को स्वदेश लौट कर मिशन की प्रवृत्ति में पुनः प्रवृत्त हुए। एक बार मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई ने संस्था की मासिक रविवारीय सभा में कहा था : "यह श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन संस्था श्रीजीमहाराज़ का स्वरूप है। इस स्थान से श्रीजीमहाराज़ की सर्वोपरि उपासना और कारण सत्संग का सारे विश्व में प्रसार होगा।"मुक्तराज़ की विदेश यात्रा का भी ऐसा ही गर्भित उद्देश्य था।

भगवान श्रीस्वामिनारायण की सर्वोपरिता का डंका बजाने वाले ज्ञानगुरु एवं श्रीजीसंकल्प ऐसे अनादि महामुक्तराज़ प.पू. श्री अबजीबापाश्री के सार्धशताब्दी वर्ष (ई.स.१९९४) मनाने का संकल्प कर मुक्तराज़ ने उसका आयोजन संभाल लिया। उनके मार्गदर्शन तले श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन ट्रस्ट तथा छत्री ट्रस्ट के कार्यकरों ने साथ सहकार से सेवा कार्य उठा लिया एवं उस पर्व को भव्यातिभव्य रूप से मनाकर श्रीजीमहाराज़ एवं उनके मुक्तों की प्रसन्नता के अधिकारी हुए। इस महान आयोजन में श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन का योगदान अपूर्व था।

मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई को ७५ वर्ष पूर्णहोने वाले थे। अतः उनके अमृत महोत्सव के निमित्त को लक्ष में रखकर ब्रह्मयज्ञ करने के बारे में सोचा गया। मुक्त को ऐसे प्रसंग मनाने में रूचि ही नहीं रहती, परंतु श्रीजीमहाराज़ को उनके अनादि मुक्त निज स्वरूप से भी अधिक प्रिय होते हैं, क्योंकि वे मुक्त प्रभु की संपूर्ण साधर्म्यता प्राप्त किये होते हैं, फलस्वरूप उनके निमित्त से जो भी किया जाता है वह प्रभु के लिये प्रभु प्रसन्नतार्थ ही होता है, यह निःसंशय बात है। इस ब्रह्मयज्ञ में भी वर्ष दौरान कथा-वार्ता,

ध्यान-भजन, धून-कीर्तन आदि प्रभु के स्वरूप में संलग्न होने की सात्त्विक प्रवृत्ति में हरिभक्तों की विशेष अभिरूचि हो अतएव ऐसा आयोजन किया गया था।

इस दौरान एक दुखद घटना घटित हुई कि सद्गुरुवर्य पूज्य श्री नारायणभाई स्वयं जिस संकल्प को लेकर पधारे थे, वह पूर्ण होने से दि.२०-९-१९९७ शनिवार भाद्रपद कृष्ण पंचमी के पावन दिन को १२:२५ बजे भौतिक देह अदृश्य कर सदाकाल के लिये मूर्ति में लीन हो गये। स्वयं को आना-जाना न होने के कारण दिव्य रूप से तो सदैव प्रकट है ही, इसकी प्रतीति अनेक हरिभक्तों को करवाई थी एवं अभी भी करवा रहे है। सत्संग में उनके कारण एक बहुत बड़ी रिक्तता हुई है, क्योंकि अनादि मुक्त मनुष्रूप से प्रकट हो तब असंख्य हरिभक्तों को जो प्रत्यक्ष भाव के सुख की प्राप्ति होती है, वह मनुष्य देह अदृश्य होने से लुप्त हो जाती है। अब तो दिव्य रूप से सदैव साथ ही है ऐसी श्रद्धा की दृढ़ता हो यही हमारा कर्तव्य, गुरुवर्यश्री को दिव्यांजलि अर्पित करने दिनांक ५ अक्तूबर,१९९७ को एक सभा का आयोजन किया गया था। जिसमें सभी संत-हरिभक्त ने गुरुदेव की स्मृति में हृदयपूर्वक दिव्यांजलि अर्पण की थी।

पूर्वायोजित कृपावर्षा ब्रह्मयज्ञ की पूर्णाहुति प्रसंग पर दि. १२-२-१९९८ से दि.१६-२-१९९८ तक ग्रंथराज 'श्रीमद् सत्संगी भूषण'की पारायण आयोजित की गई थी। पाँचो दिन अनेक संत, हजारों हरिभक्तों ने ब्रह्मयज्ञ का, महाप्रसाद का तथा प्रभु प्रसन्नता का दिव्य लाभ लिया था। जिसका वर्णन अशक्य है।

रविवारीय मासिक सभा में लाभ लेने आते बाल-युवाकों ने सभा की सात्त्विक प्रवृत्ति से प्रेरित होकर वाल-युवकों की अलग

सभा करने का सूचन किया। उसे बुजुर्ग हरिभक्तों द्वारा स्वीकृति के साथ अनुमोदन प्राप्त होनेसे मासिक द्वितीय रविवार को बाल-युवकों की सभा शुरु करने में आई। जिसमें कथा-वार्ता, ज्ञान गोष्ठी, प्रश्नोत्तर वक्तव्य आदि विविध आयोजन एवं कार्यक्रम के बारे में चर्चा आदि प्रवृत्तियाँ चलती है।

बालक एवं युवकों का शारीरिक, मानसिक, शैक्षणिक एवं आध्यात्मिक इस प्रकार सर्वांगी विकास के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए मिशन द्वारा शिबिर का भी आयोजन किया जाता है। जिसमें विद्वान अनुभवी बुजुर्गों का मार्गदर्शन तथा विद्वान व्याख्यानकर्त्ता, योगप्रशिक्षक, तालीमप्रदाताओं का भी लाभ प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त श्रीजीमहाराज़ एवं मुक्तों के प्रसादीभूत यात्रा स्थलों की मुलाकात के साथ आनंदमय वातावरण में ज्ञानगोष्ठी का भी लाभ प्राप्त हो ऐसा आयोजन भी समय-संयोग के अनुरूप किया जाता है।

पूज्यश्री नारायणभाई को शिशुओं का उत्कर्ष हो इसमें विशेष अभिरुचि थी, क्योंकि बालक निर्दोष होने से उनमें सदसंस्कारों का सिंचन सरलता से हो सकता है उनका चित्त कोमल तथा निर्मल होता है। इस उद्देश्य को लक्ष में लेते हुए सद्‌गुरुवर्य पूज्यश्री नारायणभाई के प्राकटय दिन को 'सत्संग बालदिन'के तौर पर मनाने का भाव सर्व हरिभक्तों का होने से दि.१६ फरवरी जो हमारे गुरुवर्य का प्राकटय दिन है, उस दिन बड़े ब्रह्मयज्ञ का आयोजन करना सर्वानुमत से निर्णित हुआ। तत्पश्चात हर साल दि. १६ फरवरी को 'सत्संग बाल दिन' रूप से ब्रह्मयज्ञ मनाया जाता है, जिसका असंख्य हरिभक्त लाभ लेते हैं।

अनादिमुक्त सद्‌गुरुवर्य प. पू. श्री नारायणभाई की अंर्तधान

तिथि भाद्रपद कृष्ण-५ की है। योगानुयोग परम कृपालू अबजीबापाश्री की भी श्राद्ध तिथि इसी दिन है। इस सुभग अवसर पर 'पूज्य श्री नारायणभाई स्मृति दिन'के तौर पर मनाया जाता है। इस दिन बड़े ब्रह्मयज्ञ का आयोजन किया जाता है।

अनादिमुक्त प. पू. श्री सोमचंदबापा सत्संग में 'चलते-फिरते ब्रह्मयज्ञ'के तौर पर सुप्रसिद्ध थे। उनकी पुण्यतिथि मागर्शीष शुक्ल-४ के दिन आती है। उसी दिन 'वचनामृत जयंती' भी आती है। अतः इस उभय सुभग अवसर पर संस्था की ओर से बड़े ब्रह्मयज्ञ का आयोजन किया जाता है। इन तीनों में बड़े ब्रह्मयज्ञ में कथा-वार्ता, समूह पारायण, धून-कीर्तन, मुक्तपुरुष के संस्मरण पर व्याख्यान, विद्धान संत-हरिभक्त के ज्ञान सभर वक्तव्य आदि भक्ति रस से तर-बतर कार्यक्रम होता है। जिसका असंख्य हरिभक्त लाभ लेते हैं, साथ ही प्रभु के महाप्रसाद का लाभ लेकर हरिभक्त कृतज्ञता एवं धन्यता का अनुभव करते हैं।

सेवा-सदाव्रत

मिशन द्वारा चलती सदाव्रत की प्रवृत्ति में किसी भी प्रकार के ज़ाति-जाति भेदभाव के बिना गरीब विद्यार्थी तथा गरीब परिवार के लिये सदाव्रत चालू किया। जिसमें विद्यार्थीको स्कूल की फीस, पाठय पुस्तक, नोटबुक आदि देने की, आर्थिक सहाय देने की शुरूआत की तथा गरीब संस्कारी परिवार अनाज, दवा,कपड़ा आदि की सहायता पाकर उनकी आर्थिक मुश्किल को दूर कर सके ऐसी व्यवस्था की। ऐसे सदाव्रत द्वारा ऐसे कई उदाहरण हुए कि जिस व्यक्ति ने मिशन से सहायता ली हो पश्चात अपने पैरों पर होकर पुनः कभी भी सहायता की ज़रूरत न पड़ी हो, वरन् उसने

ही मिशन में दान दिया हो . ऐसे उदाहरण में प्रभु प्रसन्नता की झाँकी हुए बिना नहीं रहती। इस प्रकार के कल्याणकारी कार्य करती अन्य संस्था : रेड क्रोस सोसायटी, गुजरात केन्सर सोसायटी, सद्‌विचार परिवार, रक्तपित्त हॉस्पिटल, अंधजन मंडल,जलाराम मंडल, संतराम आश्रम, हरि ॐ आश्रम, अनाथ आश्रम, विकलांग की शाला आदि में चंदा देना, गाँवों में स्थित हरिमंदिर के जिर्णोद्धार में सहाय करना वगैरह प्रवृत्ति अविरत रुप से चलती रहे ऐसा आयोजन किया है।

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन द्वारा सामाजिक विकास के अनेक कार्य हुए हैं। मानव समाज के सामाजिक एवं आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिये कार्यरत, अनेक संस्था को श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन ने सहायता की या करवाई है। जिसमें अनादि महामुक्तराज़ अबजी बापाश्री छत्री स्थान में मंदिर, पडाव के कमरे, छात्रालय, विद्यालय, आदि का निर्माण तथा कार्यालय व्यवस्था, संचालन व्यवस्था, ब्रह्मयज्ञ आयोजन आदि ; सरसपुर श्री स्वामिनारायण मंदिर स्त्री-पुरुषों के मंदिरों का विकास, पुंसरी सत्संग भवन का उद्‌भव तथा विकास,पाटडी सत्संग भवन, मूली मंदिर के ब्रह्मानंद भोजनालय में आर्थिक सहायता, लीमली मंदिर, सरा हरिमंदिर, ध्रांगध्रा स्त्रियों का हरि मंदिर, अयोध्या मंदिर, रामपरा सत्संग भवन, जोरावरनगर हरिमंदिर, टोरडा मंदिर आदि अनेक संस्था समाविष्ट है।

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन का प्रथम उद्देश्य सेवा-सदाव्रत के आदर्शानुसार भेद-भाव के बिना आर्थिक मुसीबत का अनुभव करते भाई-बहन को आवश्यक सहायता पहुँचाना।

इस उद्देश्य को लक्ष में लेते हुए सेवा-सदाव्रत की अन्य

प्रवृत्तिओं में एक प्रवृत्ति उच्च गुणयुक्तता वाली नोटबुक एवं फूलस्केप बुक रिआयती दाम से वितरण ई.स.२००० की साल से शुरु किया गया है। अब तक इसका लाभ असंख्य विद्यार्थी ले चुके हैं तथा ले रहे हैं। इन नोटबुक में भगवान श्री स्वामिनारायण, परम कृपालू अबजी बापाश्री तथा सद्गुरुवर्य पूज्य श्री नारायणभाई के प्रेरणादायी, दर्शनीय आकर्षक स्वरूप रखने में आये हैं साथ में पूज्य श्री नारायणभाई के प्रेरणादायी सुविचार भी रखे गये हैं। जो विद्यार्थी को नीतिमय, सदाचार युक्त तथा आध्यात्मिक जीवन जीने की प्रेरणा एवं बल प्रदान करता है।

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन के अन्य उद्देश्य- आरोग्य प्रसार की मार्गदर्शक व्यवस्था और रोगोपचार के परिचर्या केन्द्र-औषधालय की स्थापना निर्वाह या ऐसा कार्य करती संस्था को सहायता करना।

इस उद्देश्य की परिपूर्ति के लिये ई. स. २००१ की साल से प्रायोगिक तौर पर प्रथम सुबह का चिकित्सालय शुरु किया गया है। जिसका नामाभिधान 'पूज्य श्री नारायणभाई सार्वजनिक दवाखानु'(चिकित्सालय) करने में आया, समयानुसार दर्दी की संख्या में वृद्धि होने से एवं अधिक प्रतिभाव प्राप्त होने से ई. स. २००३ से शाम का चिकित्सालय भी आरंभ किया गया है। जिसमें निष्णात डॉक्टर की सेवा के अतिरिक्त तलाश, निदान, उपचार तथा दवाइयाँ आदि निःशुल्क सेवा उपलब्ध होने से अनेक दर्दी लाभांवित हो रहे हैं।

प्रकाशन कार्य

संस्था की कल्याणकारी प्रवृतिओं में से एक अत्यंत महत्व की प्रवृत्ति है, प्रकाशन प्रवृत्ति। उसके द्वारा परमात्मा के स्वरूप का

शुद्ध ज्ञान, ध्यान, उपासना, भक्ति, धर्म आदि आत्मोद्धार के कल्याणकारी साधन के बारे में स्पष्ट समझ प्रसारित होती है और सामाजिक चेतना जागृत होकर जीवन के सर्वोच्च ध्येय, प्रभु प्राप्ति की ओर मुड़ती है। प्रकाशन मानव जीवन के सामाजिक, शैक्षणिक एवं आध्यात्मिक विकास का प्रबल उपकरण है। इस उद्देश्य के लिये 'सर्वजीव हितावह ग्रंथमाला' शीर्षक तले उत्तम प्रकाशन प्रकाशित करने का निर्णय कर दि.२६-९-१९८२ के दिन प्रकाशन समिति की रचना की गई। समाज के आर्थिक तौर पर पीछड़ी कक्षा के लोगों में भी संस्कारिता के उच्चतम मुल्य पा सके तथा परमात्मा के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान पा कर आध्यात्मिक उन्नति कर सके ऐसी शुभ भावना से संस्था द्वारा प्रकाशित पुस्तक लागत किंमत से आधी से भी कम किंमत की सेवा मूल्य से वितरण करने का निश्चय किया गया है। यह एक उल्लेखनीय बात है। संस्था की विकसित होती प्रवृत्ति तथा प्रकाशन कार्य के उपयोग के लिये सूरेश्वरी सोसायटी मकान नं. २/ए को खरीद किया गया।

अब तक मिशन की ओर से ७१ उत्कृष्ट पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है तथा १४ पुस्तकों का पुनः प्रकाशन हुआ है। मिशन की ओर से प्रकाशित 'अनादि महामुक्तराज़ अबजी बापाश्री का जीवन चरित्र' इस ग्रंथ को The Federation of Indian Publishers, New Delhi की ओर से Award for Excellence in Publication, १९९३ का मेरिट एर्वार्ड एनायत हुआ है। जो प्रकाशन की उच्च गुण युक्तता साबित करता है। संस्था के अन्य प्रकाशन भी समाज में स्वीकृति पाकर लोक भोग्य बने हैं। मिशन द्वारा ऐसे उत्कृष्ट प्रकाशन का कार्य अब भी चालु ही है।

प्रकाशित हो चुके पुस्तकों की यादी :

(१) सर्वोपरि भगवान श्री स्वामिनारायण तथा
विश्व धर्म (गुजराती)

(२) अनादि महामुक्तराज़ अबजीबापाश्री (गुजराती)

(३) श्री हरि प्रार्थना (गुजराती)

(४) जनमंगल नामावली (गुजराती)

(५) शिक्षापत्री (गुजराती)

(६) अनादि मुक्तराज़ सद्‌गुरु श्री गोपाळानंद स्वामी
की बातें (गुजराती)

(७) दिव्य ज्ञानामृत (गुजराती)

(८) अनादि मुक्तराज़ परम पूज्य श्री सोमचंदभाई
जीवराजभाई महेता
-जीवन दर्शन तथा पत्रों के द्वारा उपदेश (गुजराती)

(९) ओळख्या एना अहोभाग्य (पहचानने वाले के अहोभाग्य)
-वात्सल्य मूर्ति सद्‌गुरुओ (गुजराती)

(१०) ज्ञानाचार्य अनादि मुक्त सद्‌गुरुवर्य
श्री वृंदावनदासजी स्वामी की बातें (गुजराती)

(११) कीर्तन माधुरी (गुजराती)

(१२) अनादि मुक्तराज़ स. गु. श्री तद्रुपानंद
स्वामी की नित्य स्मरणीय बातें (गुजराती)

(१३) अनादि मुक्तराज़ परम पूज्य श्री सोमचंदभाई
का पत्रों के द्वारा उपदेश (गुजराती)

(१४) प. पू. ध. धु आदि आचार्य श्री अयोध्या प्रसादजी
महाराज़ रचित कीर्तनावलि (गुजराती)

(१५) शिक्षापत्री रहस्यार्थ मननीय अध्ययन खंड-१ (गुजराती)

(१६) वचनामृत रहस्यार्थ प्रदीपिका टीकोपेतम् भाग १,२ (गुजराती)

(१७) वचनामृत ध्यानादि अध्ययन (गुजराती)

(१८) अवतार - अवतारी भेद निरूपण (गुजराती)

(१९) अनादि मुक्तराज़ अबजीबापाश्री कृत अध्यात्मज्ञान (गुजराती)

(२०) शिक्षापत्री रहस्यार्थ भाग १,२ (गुजराती)

(२१) अनादि महामुक्तराज़ अबजीबापाश्री का जीवनचरित्र भाग १,२ (गुजराती)

(२२) समग्र जीवन का योग (गुजराती)

(२३) अनादि महामुक्तराज़ श्री अबजीबापाश्री का जीवन वृतांत (गुजराती)

(२४) **Supreme Lord Shri Swaminarayan and the World Religion** (अंग्रेजी)

(२५) **Yoga for Entire Life** (अंग्रेजी)

(२६) बापाश्री की बातों का चिंतन (गुजराती)

(२७) **Let us Breathe the Fragrance Divine**
दिव्य सौरभ की अनुभूति करे (गुजराती,अंग्रेजी)

(२८) श्रीजी संमत विशिष्टाद्वैत सिद्धांत सागर (गुजराती)

(२९) श्रीजी प्रसाद (गुजराती)

(३०) कच्छ के करुणामूर्ति संत श्री अबजीबापा (गुजराती)

(३१) रसबस होई रही रसिया संग (गुजराती)
(चूने हुए सारांश रूप कीर्तन तथा छंद)

(३२) नित्य नियमावली (गुजराती)

(३३) दिव्य दर्शन – **Divine Darshan** (गुजराती,अंग्रेजी)

(३४) 'स्तोत्रम्' (गुजराती)

(३५) पूज्यश्री नारायणभाई (गुजराती)

(३६) **Pujya Shri Narayanbhai** (अंग्रेजी)

(३७) बापाश्री की बातों का एकीकरण (गुजराती)

(३८) अनादि महामुक्तराज़ श्री अबजीबापाश्री कृत
रहस्यार्थ प्रदीपिका टीका की विशिष्टताएँ (गुजराती)

(३९) परम साधर्म्ये (गुजराती)

(४०) बालको के बापाश्री (गुजराती)

(४१) शिश्रापत्री रहस्यसार खंड-२ (गुजराती)

(४२) जीवन पाथेय (गुजराती)
पूज्य श्री नारायणभाई द्वारा प्रबोधित अनुभव
सिद्ध अध्यात्मसार

(४३) ध्यान (गुजराती)

(४४) **ESSENCE OF SHIKSHPATRI** Part-2 (अंग्रेजी)

(४५) **JEEVAN PATHEYA** (Life Enhancing Principles)
Self-experienced spiritual essence taught by
Pujyashri Narayanbhai (अंग्रेजी)

(४६) बालको के मामाश्री (गुजराती)

(४७) पंचवर्तमान - विशद् अर्थ में (गुजराती)
पूज्यश्री नारायणभाई द्वारा प्रबोधित अध्यात्मसार

(४८) **Wisdom of Bapashri: Book-1** (अंग्रेजी)

(४९) **Bapashri as Experienced by Kids** (अंग्रेजी)

(५०) **Mamashri as Experienced by Kids** (अंग्रेजी)

(५१) **Wisdom of Bapashri: Book-2** (अंग्रेजी)

(५२) **Five Moral Codes -Elaborated** (अंग्रेजी)

Spiritual Essence as explained by Pujyashri Narayanbhai

(५३) प्रेरणा स्त्रोत (गुजराती)

पूज्यश्री नारायणभाई द्वारा प्रबोधित अध्यात्मसार

(५४) धर्म का मर्म (गुजराती)

पूज्यश्री नारायाणभाई द्वारा प्रबोधित अध्यात्मसार

(५५) मनोयात्रा (गुजराती)

(५६) प्रसंग माला-१ (गुजराती)

(५७) प्रसंग माला-२ (गुजराती)

(५८) अमृत सेरिता-१ (गुजराती)

(५९) अमृत सेरिता-२ (गुजराती)

(६०) कीर्तन माधुरी-२ (गुजराती)

(६१) वचनामृत मार्ग दर्शिका-१ (गुजराती)

(६२) वचनामृत मार्ग दर्शिका-२ (गुजराती)

(६३) वचनामृत मार्ग दर्शिका-३ (गुजराती)

(६४) वचनामृत मौक्तिक (गुजराती)

(६५) अमृत बिंदु (गुजराती)

(६६) सर्वोपेरि भगवान श्री स्वोमिनारायण तथा विश्व धर्म (हिंदी)

(६७) समग्र जीवन का योग (हिंदी)

(६८) **Let us Breathe the Fragrance Divine**

दिव्य सौरभ की अनुभूति करे (हिंदी,अंग्रेजी)

(६९) जीवन पाथेय (हिंदी)

(७०) पूज्य श्री नारायभाई (हिंदी)

(७१) मनोयात्रा (हिंदी)

इस प्रकार प्रकाशन प्रवृत्ति अविरत रूप से चल रही है। ऐसे उत्कृष्ट प्रकाशनों के साथ सत्संग समुदाय की माँग को मान देकर विविध साईज़ की भगवान की एवं मुक्त की मूर्तियाँ, लेमीनेटेड फोटोग्राफ्स, पूजा की पेटी, माला –कंठी, ओडियो केसेट, सी. डी. आदि का वितरण भी किया जाता है।

इन पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद भी आरंभ किया गया है। जिसे प्रकाशित करते हुए संस्था आनंद की अनुभूति करती है।

ग्रंथालय

समाज के किसी भी व्यक्ति को विविध विषयों के पुस्तक किसी एक स्थान पर ही पठन के लिये उपलब्ध हो एवं व्यक्ति को उसके जीवन रचना में उपयोगी हो ऐसे उद्देश्य से मुक्तराज ने ग्रंथालय की स्थापना की। जिसमें जिज्ञासु व्यक्ति को उसकी रुचि के विषय के पुस्तक प्राप्त हो तथा संशोधनात्मक अभ्यास भी कर सके। हरेक धर्म के पुस्तक भी ग्रंथालय में बसाये है। जिससे मुमुक्षु जीव तुलनात्मक अभ्यास कर, स्वामिनारायण धर्म सर्वोपरि एवं श्रेष्ठ विश्वधर्म है यह जान सके और सर्वधर्म समन्वयकारी विशाल दृष्टि का विकास कर सके,फलस्वरूप संकुचितता और भेद दृष्टि दूर हो।

शुरुआत में ग्रंथालय पूज्यश्री नारायणभाई के घर की उपरी मंज़िल पर चलता था। ई.स. १९९८ में श्री हरि कृपा वर्षा ब्रह्मयज्ञ प्रसंग पर सूरेश्वरी सोसायटी के मकान नं.२/ए के नवनिर्मित प्रथम

तथा द्वितीय मंजिल पर स्थानांतरित किया गया। इस ग्रंथालय का नामाभिधान 'पूज्य श्री नारायणभाई ज्ञान भवन ग्रंथालय' निम्नलिखित कारणों से किया गया है।

ग्रंथालय के पुस्तक खरीदने हो तब स्वयं ही पुस्तक खरीदने जाते। हरेक पुस्तक को चौकसी से देख-परख कर ही खरीदते, जीवन रचना में उपयोगी होने योग्य पुस्तक ही पसंद होता। ग्रंथालय में पुस्तकों की सफाई, पुस्तकों को रजिस्टर में लिखना, पुस्तक को विषयानुसार व्यवस्थित करना, इन सभी बाँतो को स्वयं ध्यानपूर्वक एवं परिश्रम से करते। स्वयं के मार्गदर्शन में कार्यकर के पास भी काम करवाते।स्वयं की सीमित आय में से भी बचत कर बुँद-बुँद सागर भरे उक्तिनुसार विशाल ग्रंथालय की स्थापना की।पचास वर्ष के लंबे समयकाल के अथाग परिश्रम की फलश्रुति रूप करीब २५ हजार पुस्तक को समाविष्ट करता यह अद्‌भुत ग्रंथालय आकारित हुआ है। गुजराती, अँग्रेजी, हिन्दी एवं संस्कृत जैसी भाषाओं में लिखित सामाजिक, शिक्षणीय एवं आध्यात्मिक, जैसे सर्वांगी विकास करने में अत्यंत उपयोगी ऐसे पुस्तकों में स्वामिनारायण धर्म तथा जगत के विविध धर्मों के तत्त्वज्ञान के पुस्तक, जीवन रचना, चारित्र्य रचना, चिंतनात्मक, शिक्षणक्षेत्र के इतिहास, विज्ञान आदि विविध विषयों के पुस्तक, महापुरुषों के जीवन चरित्र, रामकृष्ण मिशन, चिन्मय मिशन, अरविंद आश्रम, शिवानंद स्वामी का दिव्य जीवन संघ आदि जगप्रसिद्ध महान विभूति की संस्थाओं के प्रकाशन, आरोग्य संबंधित प्रकाशन; शब्दकोश, ज्ञान कोश आदि को समाविष्ट किया है। इन पुस्तकों को लोक भोग्य बनाने के हेतु एक आदर्श ग्रंथालय का निर्माण किया है।

ऐसे उत्कृष्ट प्रकार के ग्रंथालय के साथ विद्यार्थी एकाग्रचित्त

से अभ्यास कर सके इस उद्देश्य से ग्रंथलाय के ग्राउन्ड फ्लोर पर 'वांचनालय'की व्यवस्था निःशुल्क की गई है।

इस प्रकार दृष्टिकृत करने से सहज ही ज्ञात होता है कि मुक्तराज़ जिस उद्देश्य को लेकर पृथ्वी पर प्रकट हुए थे, उसे पार करने की कल्याणकारी, सर्वजीवहितावह प्रवृत्तिओं की गंगोत्री सुदीर्घकाल पर्यंत बहा दी, जिससे हमारी पीढ़ी तथा आने वाली पीढ़ी इसका अविरत लाभ उठा सके।

समय एवं संयोगानुसार संस्था के ट्रस्टीमंडल में परिवर्तन हुए है एवं होते रहेंगे। किसी भी संस्था के विकास के लिये बुजुर्गो का योग्य मार्गदर्शन एवं संनिष्ठ कार्यकर की कर्त्तव्यनिष्ठा अत्यंत आवश्यक है।सच्चे भाव से ऐसी सेवा करने वाले ही वास्तविक तौर पर ट्रस्टी है। ओहदा तो लोक व्यवहार में अनिवार्य कानूनी व्यवस्था है। प्रभु की प्रसन्नता हरेक सेवाभावी कार्यकर पर अवश्य ही उतरती है। पूज्यश्री नारायणभाई इस प्रकार की समझ देते, जो कार्यकरों में अखूटबल प्रदान करती है।

'श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन'संस्था और गुरुवर्य पूज्यश्री नारायणभाई के नाम को गौरव प्रदान करती एक अत्यंत आनंददायी घटना यह हुई कि दि. २६-९-२००२ के दिन श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन संस्था के पास से पसार होता 'नवरंग हाईस्कूल'तक के मार्ग को अहमदाबाद म्युनिसिपल कोर्पोरेशन द्वारा 'पूज्यश्री नारायणभाई मार्ग'तथा आगे के चौक को 'सहजानंद चोक'नामाभिधान करने में आया है। इस मार्ग पर आने जाने वाली हरेक व्यक्ति को भगवान श्री स्वामिनारायण तथा मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई की सहज ही स्मृति होने से कल्याण का बीज बल होता रहेगा।

उपसंहार

मानव जीवन के शैक्षणिक, सामाजिक, व्यवहारिक तथा आध्यात्मिक विकास के उद्दात उद्देश्य को फलीभूत करने के लिये मुक्तराज़ पूज्य श्री नारायणभाई ने भगवान श्री स्वामिनारायण की प्रत्यक्ष प्रेरणा एवं आदेश से श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन संस्था की रचना कर मुमुक्षुओं को श्रेय और प्रेय उभय की प्राप्ति के लिये उत्तम भूमिका प्रदान की है। निःस्वार्थ और निष्काम ऐसे इस संत मूर्ति ने स्वयं का समस्त जीवन मानव-सेवा परायण बना दिया था। स्वयं की समस्त आध्यात्मिक शक्ति का सर्वजीवहितावह कार्यो में सद्उपयोग किया। जन-जन प्रति किये उनके अनंत उपकार हम प्रतिवर्तित कदापि नहीं कर सकते। उनका ऋण अदा करने में हम असमर्थ है, यह स्वीकारना ही होगा। प्रभु स्वरूप ऐसी यह संस्था एवं उसकी कल्याणकारी प्रवृत्ति मानव समुदाय का ऊर्ध्वीकरण कर प्रभु प्राप्ति की ओर मार्गदर्शित करने की सेवा प्रदान करती है।

इस प्रकार उत्तरोत्तर विकसित होती मिशन की प्रवृत्ति से अधिकाधिक जनसमूह आकर्षित होते है। जिसको अधिक प्रतिभाव भी प्राप्त है। साथ ही मिशन के सर्वजीवहितावह उद्देश्य की परिपूर्ति भी होती है। यह सब केवल परम कृपालु परमात्मा श्रीस्वामिनारायण, बापाश्री तथा सद्गुरुवर्य पूज्य श्री नारायणभाई की असीम कृपा का परिणाम है।

अन्य एक उल्लेखनीय एवं अत्यंत आनंद और गौरवप्रद बात यह है कि भगवान के स्वरूप जैसी इस संस्था को इस वर्ष विजया दशमी के दिन २५ वर्ष पूरे हुए हैं। यह संस्था स्थापना के समय एक बिंदु के समान थी। जो विकसित होकर अविरत बहते झरने के रूप में परिवर्तित हुई है। इसमें केवल परमात्मा की कृपा एवं

सद्गुरुवर्य पूज्यश्री नारायणभाई का बलवान संकल्प समाविष्ट है। आगामी सानुकुल समय में संस्था का रजत जयंती महोत्सव भव्यातिभव्य तरीके से मनाने को, श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन परिवार संकल्पबद्ध है। इसमें श्रीजीमहाराज़, बापाश्री, सद्गुरुश्रीओं तथा सद्गुरुवर्य पूज्यश्री नारायणभाई की कृपा-प्रसन्नता अवश्य सम्मिलित होगी ऐसी हमें पूर्ण श्रद्धा है।

भविष्य में भी सद्प्रवृतिओं के धाम रूप इस संस्था के उद्देश्य अनुरूप प्रवृत्तियाँ विकसित होती रहे एवं अधिकाधिक मुमुक्षु चैतन्य आत्यांतिक कल्याण के पथ यात्री बने ऐसी प्रभु तथा सद्गुरु को प्रार्थना और सर्व के साथ सहकार की अपेक्षा के साथ श्रद्धापूर्वक के पुरुषार्थ में संलग्न होकर प्रभु प्रसन्नता के अधिकारी बने।

अस्तु!!!

११ मुक्तराज़ का व्यक्तित्व, कल्याणकारी उदात्त गुण एवं सामर्थ्य

मुक्तराज़ मध्यम कद के होते हुए भी सशक्त, विशाल भाल,आँखों में करुंणा तथा तेजस्वी मुखारविंदधारी, पहनावा बिलकुल ही सादा, घर में कुरती, कुरता और पाजामा पहनते तथा बाहर जाते वक्त खादी की टोपी, कुरता, धोती एवं पैरों में स्लीपर पहनते। चलते समय एक कतार में डग भरते। महाराज़ के स्वरूप में वृत्ति रखकर अंतरवृत्ति से अर्धबंद आँखों से त्वरित गति से चलते। बाहरी व्यक्तिव अत्यंत सादा मानो मूर्तिमान सादाई प्रकाशमान हो रही हो। व्यक्तित्व ऐसा आकर्षक कि कोई भी व्यक्ति,उनकी ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकता था। कई लोगों को ऐसे अनुभव हुए थे कि मुक्तराज़ के स्वरूप में से तेज निकलता हो, दिव्य सौरभ प्रसारित होती हो। मुक्तराज़ का रहन-सहन, पहनावा, भोजन आदि सभी कुछ सादा,स्वच्छ एवं सुव्यवस्थित था।

सत्संग मंडल मुक्तराज़ को 'मामा'के दुलारे नाम से पुकारते थे। इस लोक में माँ जिस प्रकार से बालक को संभालती है। उसी प्रकार से मुक्तराज़ भी इस लोक में माता की तरह जीवों की सांसारिक मुश्किलों से रक्षा करते तथा माँ की तरह ही संभाल कर जीवों का मोक्ष कर परलोक के सुख को प्रदान करते। उभय प्रकार से सुख प्रदान करते, अतः दो बार 'मा' 'मा'। इस लोक में तथा परलोक में सुखी करें ऐसी अलौकिक माँ अर्थात् मामा। यही अर्थ

घटन उनके लिये उचित है।

छोटे या बड़े कोई भी संत हो मुक्तराज़ उनको दंडवत् प्रणाम करते, पैर पड़ते,विनम्र भाव से बुलाते, संतों को धोती देतें,फल देतें। हरेक हरिभक्त का आतिथ्य करते, किसी के आने पर खड़े होकर, स्वागत करते, उनको टिका करते, हार पहनाते, उनको कुछ प्रसाद-भोजन करवाकर ही भेजते। किसी के इन्कार करने पर फल, नींबू-पानी आदि महाराज़ की प्रसादी कर,देतें। हरेक छोटे-बड़े व्यक्ति को आप कहकर ही आदरपूर्वक पुकारते। त्यौहार पर सभी को पैसे प्रसाद कर,देतें। दुःखी तथा व्यथित व्यक्ति को विनम्र एवं मधुर वाणी में आश्वासन देतें, जिससे उनका आधा दुःख उसी समय दूर हो जाता।

'कोई ने दुःखियो रे देखी न खमाय' (किसी को भी दुःखी नहीं देख सकते) उक्ति के अनुसार किसी को भी दुःखी देखने पर व्यथित हो जाते, उनको चरणरज देतें, उनका दुःख दूर करने हेतु महाराज़ से प्रार्थना करते, उनका दुःख दूर हो तभी उनको शांति मिलती। जो दूर बसते हो उनकी खबर फोन द्वारा भी पूछते। कभी हितशत्रु एवं तेजोद्वेषी विघ्नकर्ता बनते तब समर्थ होते हुए भी क्षमा करते तथा उन जीवों के प्रति भी करूणा दिखाकर क्षमा प्रदान करते। कभी तो ऐसा भी कहते 'अगर मैं सच्चा अनादि मुक्त हूँ तो मेरा द्वेष करने वाले या अपराध करने वाले का कल्याण प्रथम करूँ।' अहो! मुक्तराज़ की कैसी विशाल भावना और कैसी सहृदयता!! सत्संग में सदैव दासभाव रखते। जब किसी को पत्र लिखते या कोई भी लिखाई लिखनी हो तो 'सत्संग का दासानुदास'या 'दीनदास'ऐसा लिखते तथा 'दंडवत् सहित सप्रेम जय श्री स्वामिनारायण' ऐसा भी लिखते। स्वयं को उद्घोषणा पसंद न

होने की वज़ह से, स्वयं के प्रागटय दिन के निमित्त से या किसी शुभ अवसर पर मुक्तमंडल हार पहनाने जाए तो अप्रसन्नता जताते और महाराज़ को स्पर्श करवा कर हरिभक्त को ही हार पूनः पहना देते।

वाणी -वर्तन में भी ऐसी ही एकता। स्वयं जो उपदेश देते वह उनके वर्तन में मूर्तिमान दिखाई देता। वाणी वर्तन में हंमेशा सत्य का ही पालन करते। प्रमाणिक भी शत प्रतिशत, नौकरी करते तब भी किसी को निज कार्य से पत्र लिखना हो तो स्वयं का ही कागज़ का उपयोग करते। उस समय कार्यालय की पीन का भी उपयोग नहीं करते थे। अन्य को भी ऐसा ही सिखाते थे, धर्मादा का एक भी पैसा अयोग्य स्थान पर न जाना चाहिये। निज़ कमाई का पैसा भी प्रभु का ही है,अतः उसका दुरूपयोग नहीं होना चाहिये, ऐसा कहते थे। नैतिकता के प्रखर हिमायती थे।

वैसे ही निडर भी थे। विद्यार्थी काल में १९४२ के स्वतंत्र संग्राम में स्वयं ने हिस्सा लिया था। लोकचेतना की जागृति हो तथा देशप्रेम की वृद्धि हो ऐसे प्रवचन देते थे। मद्रास में जब उनके रिसर्च पेपर को मिले पुरस्कार को लेने गये, उस समय कोंग्रेस विरोधी आंदोलन चल रहा था। मुक्तराज़ की टोपी देखकर उनको कोंग्रेसी समझ कर लड़कों ने घेर लिया। मुक्तराज़ ने नीड़रता पूर्वक शांति से उनको अंग्रेजी में ऐसा समज़ाया कि लड़के मुक्तराज़ से प्रभावित होकर शांत हो गये। धर्मशुद्धि और व्यवस्थाशुद्धि की बात हो, नीड़र होकर स्पष्टरूप से कह देते। किसी की शर्म नहीं रखते थे।

स्वयं दीर्घदृष्टि द्वारा सोचकर ही लोगों को व्यावहारिक या आध्यात्मिक मार्गदर्शन देते थे। उनको भूत, भविष्य और वर्तमान

हस्तामल थे। कई बार भविष्य में ऐसा होगा यह पहले ही बता देते, पश्चात वैसा ही होता। कई बार अनिवार्य संयोग में श्रीजीमहाराज़ को प्रार्थना कर वातावरण भी बदल देते। वर्षा न होती हो तो बरसा देते, अधिक हो रही हो तो रोक भी देते। जीवों को नियम की कंठी बाँधकर उनके कई जन्मों के कर्मो को भस्म कर आवरण को हटा देते। मूर्ति को प्रसादी की कर देते उसमें कई मुमुक्षुओं को दिव्यता प्रतीत होती। प.पू. बापाश्री के सार्धशताब्दी महोत्सव के समय में प्रार्थना कर प्लेग रोग को दूर किया एवं महाराज़ के प्रताप से ऐसा चमत्कार जताया कि कोई बिमार ही नहीं हुआ। उपरांत, जो बिमार दर्शन करने आये उनकी विमारी भी दूर हो गई। हरिकृष्ण महाराज़ की मूर्ति का अभिषेक मुक्तराज़ ने किया, उस समय बापाश्री की मूर्तिमें भी स्वयं ही अभिषेक होने लगा। ऐसे दर्शन वहाँ उपस्थित हजारों लोगों को हुए। ऐसा ही अभिषेक मुक्तराज़ के अहमदाबाद के घर में उसी समय बापाश्री की मूर्ति में भी हुआ था। मुक्तराज़ ने इस यज्ञ में सभी को आखिरी जन्म के आर्शीवाद देकर, जीवों पर कृपा वर्षा कर सभी को निहाल कर दिया। स्वयं के अंर्तधान होने से पहले एवं पश्चात् कितने ही समय तक चंदन की वृष्टि श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन और उसके आसपास होती रही।

इस प्रकार परमात्मा के हरेक कल्याणकारी उदात्त गुण तथा अनंत सामर्थ्य मुक्तराज़ में सहज रूप से विद्यमान थे।

(१२) पर्यटन द्वारा कल्याण

मुक्तराज़ के सर्वजीवहितावह कार्य उनके दिव्य व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अनेक जीवों ने उनको स्वयं के ज्ञान गुरु का स्थान प्रदान किया था। उन्होंने मिशन की प्रवृत्ति के द्वारा ज्ञान गंगा बहती की, इसके अलावा उनके पास आने वाले हरेक हरिभक्त के त्रिविधताप ऐहिक दुःख तथा व्यवहारिक मुसीबतों को दूर करते और उनको आध्यात्मिक ज्ञान अर्पण करते। मानों इसमें न्यूनता हो, दया के सागर मुक्तराज़ स्नेह रुचि वाले हरिभक्तों के घर पर पधारते और उनके अरमान पूरे करते। रामपूरा, जरावला, पाटड़ी आदि अनेक गाँव और मुंबई, दिल्ही, वडोदरा आदि शहर उनके पाद स्पर्श से कृपान्वित हुए है। हरिभक्तों को सुख देने तथा उनको प्रसन्न करने के हेतु शरीर की अस्वस्थता होते हुए भी पर्यटन की मुसीबतों को झेलते। जहाँ जाते सत्संग के ज्ञान की नेग बाँटते, किसी के घर प्रसाद ग्रहण करते, किसी के घर रुक जाते, किसी के घर आरती करते, अनेक प्रकार से हरिभक्तों के मनोरथ पूर्ण करते।

अनादि मुक्त को तो तीर्थ यात्रा करने की आवश्यकता होती नहीं, क्योंकि स्वयं ही जंगम तीर्थरुप होते है। सभी तीर्थ उनके चरणों में होते हैं, परंतु अनंत जीवों का कल्याण हो और आत्यांतिक मोक्ष हो ऐसे आशय से मुक्तराज़ ने काशी, मथूरा, हरद्वार, ऋषिकेश, अयोध्या,छपैया, बद्रिनाथ आदि स्थानों की तीर्थयात्रा की थी। तीर्थाटन के समय उनके अलौकिक प्रताप दृष्टिकृत करवाते

दो-एक प्रसंग दृष्टिगोचर करें।

छपैया के पास श्रवण तालाब के स्थान में झोंपडियों में रहने वाले करीब १०० से १५० लोग थे। उनको हरेक को मुक्तराज़ ने हाथ में जल देकर नियम दिये तथा आखरी जन्म के आर्शीवाद देकर उन झोंपडियों में रहने वाले को धन्य बना दिया। उन सब लोगों को इसकी स्मृति रहे इसके लिये उनको रुपयै भी दिये।

छपैया में घनश्याम महाराज़ की मूर्ति के पाटोत्सव के उत्सव में एक बूढ़ी स्त्री भीड़ में गिर कर बेहोश हो गईं, प्राण त्यागने जैसी स्थिति हो गई। मुक्तराज़ ने उनको चरणरज दी,चरणरज मुख में जाते ही वृद्धा जागृत हुई और बोलीं 'इस चरणरज में से दिव्य सुगंध आती थी और मुझे महाराज़ के दर्शन हो रहे थे'। मुक्तराज़ जिस तीर्थ में जाते वहाँ के नदी, तालाब, सागर में प्रभु की चरणरज डालकर उनमें स्थित जीवों का तथा तीर्थ का माहात्म्य जानकर स्नान करने वाले तथा दर्शन करे उन सभी का कल्याण हो ऐसा संकल्प करते। इस प्रकार हर तीर्थ को पावन कर सजीवन किये।

समस्त विश्व में जीवों का आत्यांतिक कल्याण हो ऐसे उद्देश्य से मुक्तराज़ ई. स. १९९३ में पू. लीलाबेन तथा अन्य हरिभक्तों के साथ ईंगलेंड (युनाइटेड किंगडम) तथा अमेरिका पधारे। जीवों का भला हो ऐसा शुभ संकल्प मुक्तराज़ का सदैव रहता। विदेश के हरिभक्तों की खुशी की सीमा न थी। उनके जीवन का दुर्लभ ऐसा सुखद अवसर व अनोखा प्रसंग था। विदेश निवासी हरिभक्तों के लिये ही नहीं, अपितु समस्त सत्संग के लिये यह एक अनोखा प्रसंग था, कयोंकि विदेश की धरती के ऐसे महान भाग्य कि अनादि मुक्त के पादस्पर्श से वह भूमि पावन हुई! हरिभक्तों को लाभ देने

के अलावा मुक्तराज़ ने वहाँ के डॉक्टर को भी निज वाणी, व्यक्तित्व और दिव्य भाव से प्रभावित किया। कई घरों में पधरावनी कर महाराज़ की आरती उतारते तथा आर्शीवाद देते। वहाँ के लोगों को प्रवचन देकर शुद्ध उपासना की समझ दी। वहाँ के बुद्धिजीवी भी मुक्तराज़ के प्रवचन तथा अलौकिक प्रभाव से प्रभावित हुए थे। कुछ लोग तो मुक्तराज़ की वाणी तथा व्यक्तित्व से इतने प्रभावित हुए कि अपना रहन-सहन एवं आहार बदल कर मुक्तराज़ के कथनानुसार रहने को तैयार हो गये। टोरेन्टो में तो एक सत्संगी को सुबह में मुक्तराज़ पूजा करते थे, उस समय मुक्तराज़ के स्वरुप में से तेज़ निकलते हुए दर्शन हुए। अतः उसको मुक्तराज़ के प्रति अत्यंत दिव्यभाव हुआ और मुक्तराज़ की आदरपूर्वक पधरावनी अपने घर कर आर्शीवाद लिये।मुक्तराज़ जहाँ-जहाँ जाते वहाँ के नदी, तालाब सागर तथा नायगरा फॉल, पेसेफिक महासागर आदि हरेक जगह में चरणरज डालकर उनमें स्थित जीवों का कल्याण हो ऐसा शुभ संकल्प करते थे।

इस प्रकार प्रवास के द्वारा प्रभु के स्वरुप के ज्ञान की दिव्य सौरभ प्रसारित कर अनेक जीवों का कल्याण किया।

(१३) सत्संग के विकासलक्षी कार्य

मुक्तराज़ सहज तौरपर अंर्तवृत्ति रखते अतएव, सदैव ही मूर्त्ति के सुख में गुलतान रहते। तथापि, सर्वजीवहितावह हेतु सत्संग में अनेक विकासलक्षी कार्य किये।

अनादिमुक्त बापाश्री की दिव्य तपोभूमि छत्री स्थान का विकास हो, ऐसे मुनिस्वामी के संकल्प को साकार करते हुए, उस स्थान का, अ.मु.प.पू. जादवजीबापा एवं कच्छ-गुजरात के संत-हरिभक्तों का साथ और सहकार लेकर विकास किया। गुरुकुल, छात्रालय, विद्यालय तथा बापाश्री के जीवन प्रसंग के चित्रों का सुंदर प्रदर्शन आदि का आयोजन किया। मिशन संस्था की स्थापना के पूर्व 'अ. मु. अबजीबापाश्री स्मारक टस्ट गुजरात' द्वारा वचनामृत, बापाश्री नी वातों, वृंदावनदासजी स्वामी नी वातों आदि पुस्तकों का प्रकाशन कर, मुनिस्वामी के प्रकाशन कार्य के शुभ संकल्प को भी साकार किया। सरसपुर में स्त्रियों का मंदिर अलग किया एवं पुरुषों के मंदिर का विकास किया। कई गाँवों में हरि मंदिर करवाये हैं। मूली मंदिर के पड़ाव के कमरे तथा विशाल् भोजन खंड़ 'श्री ब्रह्मानंद भोजनालय' के विकास में सहायता की है। कई धार्मिक जगहों का जिर्णोद्धार भी करवाया है।

मुक्तराज़ के प्रभाव से प्रभावित होकर आचार्यश्री तथा समिति ने यह निर्धारित किया कि उपासना शुद्धि के बारे में मुक्तराज़ जैसा कोई लिख नहीं सकता। अतएव यह कार्य मुक्तराज़ को सौंपा और मुक्तराज़ ने उस कार्य को सुंदर रुप देकर

'भगवान स्वामिनारायण' नामक मासिक में विशिष्ट अंक में लेख लिखा। तब से उपासना शुद्धि के कार्य को गति प्राप्त हुई है। नाराणपुरा, श्रीस्वामिनारायण मंदिर की भूमि पूजन विधि ध.धु. प.पू. आचार्य श्री के सूचनानुसार मुक्तराज़ ने की। उस समय मुक्तराज़ ने शुभ संकल्प किया कि इस मंदिर का भविष्य में बहुत विकास हो, अनेक जीवों का कल्याण हो तथा सत्संग की वृद्धि हो। इस संकल्प को साकार रूप से फलीभूत होता हम दृष्टिकृत कर सकते है। तत्पश्चात, छारोड़ी में भी पू.जोगीस्वामी के साथ मुक्तराज़ ने गुरुकुल का भूमिपूजन कर पुनः शुभ संकल्प किया है। जो इस समय साकार हो रहा है। स्वामिनारायण गुरुकुल के सेवालक्षी कार्य की प्रशंसा कर उनको प्रोत्साहन देकर वहाँ भी कई बार उपासना शुद्धि के प्रवचन दिये है।अनेक जीवों में उसके प्रति शुद्धता प्रर्वतित की है। 'श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन' जैसी संस्था की स्थापना की है। जहाँ आज भी उत्कृष्ट विकास लक्षी कार्य अविरत रूप से चल रहे हैं। आज भी मुमुक्षु आकर इस संस्था का लाभ ले सकते हैं।

(१४) आध्यात्मिक मार्गदर्शक

पृथ्वी पर आकर हरेक जीव को अगर कोई कार्य करना है तो वह है, श्रीजीमहाराज़ की मूर्ति का साक्षात्कार, परंतु उस साक्षात्कार और इसके मार्ग पर आगे बढ़ने के लिये आवश्यकता है, सच्चे ज्ञान एवं योग्य मार्ग दर्शन की। अतएव, पूज्य श्री नारायणभाई जैसे अनादि मुक्त की आवश्यकता है। जो वास्तविक रूपसे मार्गदर्शक बनकर राह दिखाये एवं मुमुक्षुओं को पात्र भी बनाये।

आध्यात्मिक पंथ पर अग्रसर होने के इच्छुक मुमुक्षु,उच्च कोटि के साधन दशा के साधक, उनमें स्वामिनारायण संप्रदाय के हों वे तो मार्गदर्शन पाते ही थे, अपितु अन्य संप्रदाय के साधक भी मुक्तराज़ के पास मार्गदर्शन पाने आते थे। सभी को उनकी पात्रतानुसार, उनकी उलझन के प्रश्नों का निराकरण कर देते थे। ध्यान योग में, भजन-भक्ति में अवरोधित करती आंतरिक मुसीबतें, उलझनें सुलझा देते तथा अंतःशत्रु से लड़ने अचूक उपाय भी बताते। पात्र मुमुक्षुओं को एवं साधक को उच्च प्रकार की आध्यात्मिक अनुभूति भी करवाते। वास्तविक तौर पर इच्छुक मुमुक्षु को ध्यान की रीति भी सरल एवं सुंदर तरीके से सिखलाते। कई मुमुक्षुओं को तो समीप बैठे-बैठे ही बिना वार्तालाप के ही आंतरिक तौर पर उलझते प्रश्नों का निराकरण अपने आप ही मिल जाता। कई लोगों के तो जीवन ही उनके उपदेश वचन द्वारा बदल गये है। दूर रहते हुए भी अगर कोई मुक्तराज़ का दिव्य भाव सहित स्मरण

करता तो उसे भी मार्गदर्शन मिल जाता।मुसीबत में उनकी रक्षा होती और अवरोध दूर हो जातें। कई बार अंतःप्रेरणा भी होती फलस्वरूप, मुमुक्षु को स्वयं के विकट समय में निर्णय लेने में अद्‌भूत सहायता मिलती।

उपदेश देते वे भी अचूक एवं हृदय स्पर्शी। कई बार सभा में कहते, 'किसी भी संप्रदाय का व्यक्ति हो, मुझे अगर आध्यात्मिक विषय में कोई भी प्रश्न पूछे, मैं श्रीजीमहाराज़ का स्मरण कर,मूर्ति को केंद्र में रखकर वैज्ञानिक तरीके से हृदय स्पर्शी उत्तर दे सकता हूँ।' उनके उत्तर से प्रश्न पूछने वाले के दिल में से हाँ हो जाए,ऐसे संतोष कारक उत्तर देते थे। किसी के भी साथ बातें करें तो मुख्यरूप से प्रभु के स्वरूप में संलग्न होने की ही बात करतें। स्वामिनारांयण संप्रदाय विश्व के अन्य धर्मो की अपेक्षा श्रेष्ठ है एवं विशाल दृष्टिकोण वाला है,इस बात को लोग सरलता पूर्वक समझ सके इस हेतु से 'भगवान श्री स्वामिनारायण एवं विश्व धर्म' नामक छोटी पुस्तिका उन्होंने लिखी। महाराज़ द्वारा बताये गये पंचवर्त्तमान का हरेक व्यक्ति दृढ़ता पूर्वक पालन करे,ऐसा उनका आग्रह रहता था। जो कोई इसका प्रयत्न करता उस पर अधिक प्रसन्नता दिखाते थे। पंचवर्तमान अर्थात् क्या? इसका वास्तविक ख़्याल देता पुस्तक 'समग्र जीवन का योग' भी मुक्तराज़ ने संक्षिप्त में लिखा है। फलतः जीव उसके पठन से पंचवर्तमान का योग्य रूप से पालन कर प्रभु प्रसन्नता पा सके।

उनकी पूर्ण मुक्तदशा होने के कारण आध्यात्मिक के अतिरिक्त व्यावहारिक प्रश्नों के हल भी अचूक तरीके से देते थे। वचनसिद्धि भी दिखाते। किसी को प्रसन्न हो कर आर्शीवाद देते तो तुरंत वैसा ही हो जाता था। उदाहरण स्वरूप एक हरिभक्त की नौकरी नहीं

थी। उसने मुक्तराज़ को गद्‌गदित होकर प्रार्थना की। मुक्तराज़ को उसकी दया आ गई, करुणा से बोले "आप चिंता न करें,कल आपको नौकरी मिल जाएगी।" और वास्तव में दूसरे ही दिन उस हरिभक्त को अच्छी नौकरी मिल गई। कई रोगियों के रोग करुणासभर मुक्तराज़ ने संकल्पमात्र से दूर कर दिये है। कई लोगों को श्रीजीमहाराज़ को याद कर भूत के कष्ट से तथा मलिन विद्या की असर से मुक्त करवाया है। किसी के खेत में पानी न निकलता हो तो कागज़ पर नक्शा बनाकर उसमें जगह दिखाते, यहाँ खोदने पर पानी मिलेगा और वहाँ से कभी खत्म न हो, ऐसा पानी मिलता। कितनों को जमीन में गढ़े धन के बारे में भी बता देते।

मुक्तराज़ पृथ्वी पर के जीवों के अभ्युदय तथा उत्कर्ष के मार्गदर्शक तो थे ही, परंतु देव कक्षा के जीवात्मा का भी उत्कर्ष करते थे। मुक्तराज़ जिस समय शिक्षक थे, उस समय एक बार विद्यार्थियों एवं अन्य शिक्षक के साथ पर्यटन के लिये पावागढ़ गये थे। पावागढ़ में जो अंतिम सीधी सीढ़ियाँ मंदिर तक जाती हैं, उन सीढ़ियों के पास पेड़ के नीचे मुक्तराज़ बैठे और सभी को दर्शन करने जाने को कहा। सभी कोई सीढ़ी चढ़ कर माताजी के दर्शन करने मंदिर गए और माताजी स्वयं सुंदर एवं सौम्य स्वरूप में श्वेत वस्त्र धारण कर नीचे पधारीं, मुक्तराज़ को वंदन कर स्वयं के आत्यांतिक कल्याण के लिये आर्शीवाद माँगे। मुक्तराज़ उसे आर्शीवाद देते हुए बोलें "आप का कार्य पूर्ण होने पर आपका मोक्ष होगा" माताजी प्रसन्न होकर अदृश्य हो गईं। ऐसे दर्शन अन्य व्यक्तियों को भी हुए थे।

(१५) बीमारी की अलौकिक लीला

श्रीजीमहाराज़ की मूर्ति में अखंड किलकारी करते श्री हरि के परम लाड़ीले अनादि मुक्त प्रभु के संकल्प से अवनी पर पधार कर अनेक मनुष्यलीला द्वारा दया से अनेक जीवों को मूर्ति के सुख में सुखी करते है। उनके द्वारा श्रीजीमहाराज़ हरेक कार्य करते होने के कारण, मुक्त की सेवा महाराज़ की सेवा ही मानी जाती है, मुक्त की प्रसन्नता महाराज़ की ही प्रसन्नता मानी जाती है। सेवा भक्ति की प्रकृति वाले हरिभक्तों को सेवा का दुर्लभ एवं अलभ्य लाभ प्राप्त हो इस हेतु से मुक्त बीमारी ग्रहण करते है। अक्षम्य प्रारब्ध के अभेद आवरण जो जीव से चिपके हुए हैं, उसे स्वयं की देह पर लेते हो ऐसा भाव प्रतीत कर, जीव के हेतु मोक्ष मार्ग मुक्त कर देते है। उन प्रारब्ध कर्मो की असर स्वयं की देह पर इस लोक में जताते है। जिसमें उनको कोई पीड़ा या दुःख का अनुभव नहीं होता है,परंतु कृपा पात्र को बीमारी की लीला के द्वारा अलौकिक स्मृति करवा देते है।

मुक्तराज़ सुरत में अभ्यास करते थे उस समय न्यूमोनिया ग्रहण किया था, जिसे पाटण जाने तक चलाया था। पश्चात हरिभक्तों की प्रार्थना स्वीकार कर स्वतंत्र रूप से बीमारी को त्याग दिया। अहमदाबाद में एक बार टाइफोइड को ग्रहण किया था। उस बीमारी को लंबे समय तक रखने के पश्चात स्वतंत्र रूप से उसको विदा किया। कई बार मेलेरिया जैसे बुखार को ग्रहण करते और इच्छानुसार त्याग करते। ऐसा स्वतंत्र रूप से करते जिससे

डॉक्टर भी आश्चर्य चकित हो जाते और मुक्तराज़ को भगवान के महान संत पुरुष मानते। इसी प्रकार ई.स.१९९१ २७ जनवरी के दिन मुक्तराज़ ने शरीर में हृदयरोग के हमले का दर्द जताया। पंद्रह दिन हस्पताल में रह कर कई मुमुक्षुओं को सेवा का अनन्य लाभ देकर, उनके प्रारब्ध कर्म कम कर, उनको प्रभु के अधिक करीब पहुँचा दिया। मुक्तराज़ की बीमारी के दौरान हृदय की बीमारी वाले सभी मरीज़ अच्छे हो गये थे। इस बीमारी में हरिभक्तों की प्रार्थना सुनने के बाद, बीमारी त्याग दी, ऐसा जताने लगे और तबियत अच्छी होने लगी उसे देखकर डॉक्टर भी आश्चर्य चकित हो गये और उनके मुख से 'इम्पोसिबल'(असंभव) शब्द निकल पड़ा। बीमारी उनके आधीन हो वैसे मुक्तराज़ जब चाहे बढ़े, कम हो और जब इच्छा करे दूर हो जाये। हस्पताल में एक मुस्लिमभाई को मुक्तराज़ के स्वरूप में से तेज निकलता हो ऐसे दिव्य दर्शन हुए। जिससे वे कहने लगे "ये तो 'अल्लाह'है।" मुक्तराज़ शिक्षण क्षेत्र में थे, उस समय कक्षा में बोलना पड़ता था। पश्चात सत्संग सभाओं को संबोधित करने तथा प्रवचन देते, हरिभक्तों के साथ वार्तालाप एवं ज्ञानोपदेश करने में अविरत वाणी के उपयोग के कारण बढ़ते समय के साथ उनके गले के स्वरतंतुओं में सुजन हो गई। जिसके फलस्वरूप बोलने में तकलीफ होने लगी, स्पष्ट आवाज़ न निकलती, बोलने में खिंचाव होता था, तथापि करूणा कर जीवों के उद्धार हेतु तथा कल्याणकारी प्रवृत्ति हेतु बोलना ही पड़ता। फलतः स्वयं की तकलीफ की अवगणना कर प्रवृत्ति करते ही रहे। गले की तकलीफ आखिरी तक जताई, तथापि जब इच्छा करते स्वतंत्र रूप से इस तकलीफ को दूर कर

स्पष्ट आवाज़ में घंटो तक बोलते।

इस प्रकार मुक्तराज़ जीवों के कल्याण हेतु स्वतंत्र रूप से बीमारी को ग्रहण करते और त्याग भी कर देते।

(१६) आखिरी बीमारी एवं अंतिम विदाई

श्री हरि के लाड़ले अनादि मुक्त श्रीजी संकल्प से स्वतंत्र रूप से जब इस पृथ्वी पर पधारते है, जीवों के कल्याण का विशिष्ट संकल्प लेकर ही पधारते है एवं वह कार्य पूर्ण होते ही संकल्प रूप इस देह द्वारा जो लीला करते है उसे संकुचित कर श्रीजी के सुखमें लीन हो जाते है।

मुक्तराज़ का यह ७५ वाँ यानि अमृतवर्ष़ था। इस अमृत वर्ष को सर्वोपरि श्रीहरि कृपावर्षा ब्रह्मयज्ञ के तौर पर मनाने का निर्णय सभी स्नेह-रूचि वाले हरिभक्तों ने किया था। संपूर्ण वर्ष दौरान समस्त जीवन प्रभु के स्वरूप में संलग्न होने के योग रूप कथा-वार्ता-भजन-कीर्तन-धून-सत्संगसभा-ब्रह्मयज्ञ आदि सात्त्विक प्रवृत्ति द्वारा प्रभु की तथा मुक्तराज़ की प्रसन्नता पाने का संकल्प किया था। ईश्वरेच्छा कुछ अलग ही होगी, इस अमृतवर्ष में ही अमृतधारा को लौकिक दृष्टि से बहती बंद करने का संकल्प मुक्तराज़ ने मानो अज्ञातवास में जाने से पूर्व ही कर लिया था। कई बार कुछ हरिभक्तों को मर्म में स्वयं के अदृश्य होने का संकल्प ज्ञात भी करवा दिया था, परंतु उस समय उन हरिभक्तों को उन वचनों का वास्तविक ख्याल न आया। देहलीला संकुचित करने से पहले मानो अधिक प्रसन्नता जताते हो, सत्संग सभा में अधिक प्रसन्नता जताते। अज्ञातवास में जाने से पूर्व सर्वमंगल सोसायटी के हरेक घर में पधरावनी की, महाराज़ की आरती कर प्रसन्नता जताई, आर्शीवाद बरसा कर सोसायटी के हरेक सभ्य को अलौकिक स्मृति कर दी।

करीब चार महीने के अज्ञातवास के बाद अचानक बीमारी ग्रहण की, दि. १५ सितंबर , के दिन हस्पताल में दाखिल हुए। घर पर पू. लीलाबेन को फोन कर आश्वासन दिया, "आपकी तबियत दुरस्त न होने से आप घर पर ही आराम करे, हम एक-दो दिन में ही घर आयेंगे" किसी को निज संकल्प से ज्ञात न होने दिया। सेवकों को भी यही कहा "आप चिंता न करें, हम बीमारी को त्यागने वाले है।" ऐसे वचन से सेवक के मन में धीरज़ थी कि पीछली बीमारी की तरह ही इस बार भी मुक्तराज़ बीमारी का त्याग कर लंबे समय तक दर्शन-सेवा-समागम का सुख देंगे, परंतु तत्पश्चात मानो कोई प्रार्थना ही न कर सके या कोई कुछ कह न सके ऐसे उद्देश्य से गहन समाधि में चले गए। पू. लीलाबेन के आनेपर मात्र आँखे खोलकर उनकी ओर अमी दृष्टि कर पुनः गहन समाधि में चले गए। सेवक चाहे कितना ही प्रयत्न करे, प्रार्थना करे परंतु कुछ बोलते या सुनते ही नहीं थे। ऐसा होने से सेवक की उलझन बढ़ती ही जाती थी। इस बीमारी में तो लीला संकुचित कर लेने का निर्णय कर ही लिया था। अतएव कोई सुधार दृष्टिगोचर ही नहीं होता था। सेवक के अलावा किसी और हरिभक्त को बीमारी से अवगत ही न होने दिया। अल्प बीमारी में ही शनिवार, २० सितंबर १९९७ के दिन १२:२५ को स्वतंत्र रूप देह लीला को समाप्त कर दिया।

सभी के आधार सर्व को निराधार कर चले गए। सभी सेवक स्तब्ध हो गए, गात्र शिथिल हो गए, मानो वज्रघात हो गया हो! वे तो इसी आशा में थे कि अब मुक्तराज़ बीमारी का त्याग करेंगे, अब त्याग करेंगे परंतु आशा फलीभुत न हुई और मुक्तराज़ चले गए। उनका तो सर्वस्व जा चुका था। क्या करे कुछ सुझता

नहीं था। कुछ संभलने के बाद सेवको ने सत्संग में सभी को फोन के द्वारा अवगत किया। इसके अलावा टी. वी. एवं समाचार पत्र में भी समाचार-लेख छपवाये। हरेक को मुक्तराज़ आत्मीय थे ही, अतः ज्ञात होते ही हजारों हरिभक्तों का समुदाय इकट्ठा हो गया। हरेक के चहेरे पर गहरी उदासी प्रतीत होती थी। मुक्तराज़ के अंतिम दर्शन के लिये सभी कोई आतुर था। हजारों का जनसमूह, वातावरण शोकमग्न, परंतु मुक्तराज़ ने हर किसी को धीरज की प्रेरणा दी थी। हर व्यक्ति उनके द्वारा दिया गया ज्ञान, मुक्तों को आना जाना नहीं होता, वे सदैव साथ ही रहते है, याद कर स्वयं को सांत्वना देते थे।

हरेक को मुक्तराज़ के अंतिम दर्शन का लाभ मिल सके अतः उनके देह की अग्निसंस्कार विधि दूसरे दिन २१-९-१९९७ को करने का निर्णय किया गया। २० तारीख को सारी रात अखंड धून थी। जो भी हरिभक्त आते मुक्तराज़ के दर्शन कर धून में सम्मिलित हो जाते। सुबह होते-होते हजारों हरिभक्त एकत्रित हो गए।

२१ तारीख को सुबह ९:३० बजे मुक्तराज़ की अंतिम दिव्य यात्रा की पालखी आरती करने के पश्चात महाराज़, बापाश्री तथा मुक्तराज़ की जय घोषणा के साथ मिशन में से निकली। हर कोई शांत चित्त से महाराज़ की धून बोलते हुए आगे बढ़ रहा था। राह में सेवक महाराज़, बापा एवं मुक्तराज़ की जय बोलते हुए अबीर, गुलाल, पुष्प, अक्षत् एवं रूपये-पैसे उड़ा रहे थे। साढे नौ बजे निकली हुई पालखी करीब साढे ग्यारह बजे नारायणघाट पहुँची। उस समय तो महाराज़-बापाश्री तथा मुक्तराज़ के जय घोष से समग्र वातावरण गुँज रहा था। दोपहर १२:०६ बजे जब मुक्तराज़ की देह को अग्निसंस्कार विधि हुई, तब इतने समय से रखे धीरज

बाँध टूट गये और अश्रुओं के रूप में बहने लगे। सिसकियों से वातावरण गमगीन हो चूका था, सर्वत्र सूनकार हो चूका था। उपस्थित हजारों का जनसमूह मुक्तराज़ की अंतिम विदाई अश्रुभरी आँखो से देख रहा था। तथापि किसी का मन यह मानने को तैयार ही न था कि मुक्तराज़ मनुष्य देह से अब नहीं रहे।

मुक्तराज़ को आना जाना नहीं होता। केवल सेवक को देह द्वारा जो सेवा प्रदान करते थे, प्रसन्न होते थे, सुख देते, वह अब न रहा था। स्वयं दिव्य भाव से सदैव साथ ही है, इसकी अनुभूति, दूसरे ही दिन दिव्यरूप से पू. लीलाबेन को दर्शन देकर, उनसे पानी माँग कर उस पानी को ग्रहण कर करवाई। इस प्रसंग से सभी को कुछ धीरज प्राप्त हुई और सभी ने मुक्तराज़ के दिये उपदेश को याद कर उस राह पर अग्रसर होने का दृढ़ संकल्प किया।

लौकिक दृष्टि से वे अदृश्य हुए तथापि उनको तो आना जाना है ही नहीं। वे तो सदैव है, है और है ही।उनके जाने के पश्चात स्नेह-रूचि वाले अनेक हरिभक्तों को मुक्तराज़ की मौजूदगी की अनुभूति अनेक बार अनेक तरीके से हुई है। वे कहीं नहीं गये - हमारे साथ ही है - भेद केवल हमारी समझ एवं दृष्टि का है।

मुक्तराज़ ने अबजीबापाश्री द्वारा समझाया हुआ भगवान श्री स्वामिनारायण के सर्वोपरि ज्ञान तथा उपासना को वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समझा कर ज्ञान गंगोत्री बहती की है। ध्यान के गहन मार्ग की रीति सरल तरीके समझा कर प्रभु प्राप्ति का मार्ग भी सरल किया है। जो सच्चे मुमुक्षु के लिये अत्यंत उपयोगी है। इस प्रकार जीवों के दुःखों को दूर कर वास्तविक रूप से पथदर्शक बने और मुमुक्षुओं को अग्रसर होने की प्रेरणा दी। अनेक लोगों को

मुसीबत में सहायता की। दया के सागर, करूणा मूर्ति, कृपालु आदि उनके गुणो को जीवों के अभ्युदय हेतु सार्थक किया। स्वयं के वाणी-वर्त्तन द्वारा जीवों को वास्तविक रूप से जीवन जीना सिखाया। इस प्रकार मानव जीवन के भौतिक तथा आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिये उनका समस्त जीवन सेवार्पण किया। ऐसे मुक्तराज़ के उपकार का प्रतिफल तो हम नहीं दे सकते, तथापि उनके कल्याणकारी गुण तथा आदर्शो का अल्पांश भी अगर जीवन में चरितार्थ कर सकेंगे तो भी उनकी अलौकिक कृपा के पात्र अवश्य ही होंगे।

अस्तु!

(१७) अमृत बिंदु....

१ जब किसी सभा में संबोधन करे या कुछ भी बोले तो यह कहें कि परम कृपालु श्रीजी महाराज़, उनके अनादि महामुक्तराज़ अबजीबापाश्री, सद्‌गुरु तथा दिव्य सभा को कोटानकोटि वंदन करता हूँ। तत्पश्चात् ही बोलना आरंभ करें, तो महाराज़ एवं मुक्त प्रसन्न होते हैं।

२ जैसे आप मुझे देखते है और मैं आप को देखता हूँ। उतने ही स्पष्ट तरीके से जब आँखे बँध करने पर महाराज़ की मूर्ति दृष्टिकृत हो तब ही ध्यान की दृढ़ता होती है।

३ भगवान का हरेक अंग इतना रमणीय है कि भगवान मनुष्यरूप से जब प्रकट हो उस समय अगर संपूर्ण सौंदर्य लेकर-प्रकट हो तो सर्व जीव आकर्षित हो जाए। समस्त जगत की सारी क्रियाएँ ठप्प हो जाए। अतएव मनुष्य के सदृश ही होकर दर्शन देते है।

४ जो ज्ञान हमारे जीवन निमार्ण में उपयोगी न हो उस ज्ञान का कोई अर्थ है? जीवन निर्माण में उपयोगी हो वह ज्ञान सार्थक है।

५ सभी प्रश्नों का उत्तर महाराज़ की मूर्ति है।

६ प्रार्थना शक्तिशाली हथियार है। प्रभु को निःस्वार्थ भाव से प्रार्थना करें।

७ परमात्मा का संबंध यानि केवल निर्मलता, तो वह स्वरूप हमारे व्यक्तित्व को बदले बिना कैसे रहे?

८ अनादिमुक्त प्रभु के पास पहुँचने का सर्वोत्कृष्ट माध्यम है। इस माध्यम के बिना प्रभु के पास पहुँच नहीं सकते हैं।

९ हमें जब से महाराज़ तथा मुक्त मिले है, तब से काल, कर्म और माया का प्रभुत्व नहीं रहा। यह सोचकर सदैव महाराज़ का स्मरण करें एवं सदा आनंद में रहें।

१० महाराज़ तथा मुक्त को प्रार्थना कर संपूर्ण शरणागति के भाव के साथ सभी कार्य उनको सौंप दें। वे सब पार लगा देंगे।

११ ज्ञाति-जाति ये इस लोक के शब्द है। हमें तो केवल सत्संगी की ही ज्ञाति रखनी है। वही हमारी वास्तविक ज्ञाति है।

१२ व्यक्ति में स्थित सात्त्विक राग भी बंधन कर्त्ता है। यह सात्त्विक राग सत्पुरूष से सच्ची समझ पाकर दूर करना चाहिए, तभी प्रभु प्राप्ति का मार्ग सरल होता है।

१३ सभी कार्य भगवान की प्रसन्नता के लिये करें, स्वश्लाधा एवं प्रसिद्धि के लिये कुछ न करें।

१४ महान मुक्त प्रशंसा से पर है। उनमें रह कर महाराज़ बोलते है, सर्व कार्य करते है। अतः उनकी प्रशंसा से महाराज़ की प्रशंसा होती है।

१५ जिसके द्वारा पात्रता हुई हो उसकी महिमा जाननी चाहिये। अगर भूल जाये तो पात्रता नहीं रहती है।

१६ महाराज़ या मुक्त के सपने में या दिव्य स्वरूप से दर्शन हो तो अन्य को कह कर आत्मप्रशंसा न करें। भीतर ही अंतःकरण में आनंद लें।

१७ विद्यार्थी भगवान का स्मरण कर पेपर लिखे। महाराज़ को याद कर लिखने से महाराज़ हमारे संग दिव्यभाव से

संलग्न होते है, पश्चात महाराज़ ही पेपर लिखते है।

१८ महाराज़ के स्वरूप की वास्तविक समझ तथा ज्ञान मुक्त की कृपा से ही होता है, रहता है एवं टिकता है।

१९ डॉक्टर सभी प्रकार के ऑपरेशन करते है, परंतु कोई भी ईगो सर्जरी नहीं कर सकता है। हमें स्वयं ही आत्मनिरीक्षण द्वारा हमारे ईगो की सर्जरी करनी चाहिये। हरेक कार्य महाराज़ करते है ऐसा विचार करने से ईगो की सर्जरी होती है अहंकार पिघल जाता है।

२० भगवान जिस पर प्रसन्न होते है उसी की कसौटी करते है। कसौटी करने वाला कौन है? अवश्य ही करे। कसौटी में से पार भी वे ही लगायेंगे। ऐसी दृढ़ता रखनी चाहिये।

२१ मुक्त तो मूर्ति के सिवा कुछ देखते ही नहीं है। वे तो मूर्ति का ही सुख भोगते है, जानकारी भी एक मूर्ति के सुख की ही है। उनके द्वारा कर्ता भाव महाराज़ का ही है।

२२ आर्शीवाद ही प्रसादी है, पश्चात किसी प्रसादी की आवश्यकता नहीं रहती है।

२३ भगवान को सर्वोपरि समझने के लिये भिन्न-भिन्न कक्षा, भिन्न-भिन्न भूमिका से अलग होना चाहिये, वे मात्र चर्चा एवं बौधिक मनोरंजन का विषय बनकर रह जाती है। जब अनुभव ज्ञान होता है, तब नास्तिकता, शंका – कुशंका टलकर विवाद मात्र का अंत हो जाता है।

२४ भगवान के स्वरूप की अखंड स्मृति रहे यह सबसे बड़ी प्राप्ति है और उसका दिव्य सुख में रूपांतर हो यही साक्षात्कार की स्थिति है।

२५ महाराज़ की आज्ञा का लोप करने से महाराज़ का द्रोह किया कहा जाता है। कोई द्रोह कर रहा हो, उस समय अगर बस में न हो तो मौन प्रतिकार कर वहाँ से हट जाए। ऐसे वातावरण में ध्यान भजन में विक्षेप होता है। आज्ञा लोप के समय अनदेखा करना भी एक प्रकार का द्रोह ही है।

२६ अंतःशत्रु से मुक्त होने के पश्चात एवं संकल्पों के बंद होने के पश्चात ही वास्तविक शांति आती है। जिसने हदय में भगवान की स्थापना की हो उसे ही इस सुख की प्राप्ति और शांति होती है।

२७ भगवान के दिव्य साकार स्वरूप के दर्शन हो उस समय जो दिव्यानंद का अनुभव होता है वह किसी भी आनंद से अनंत गुना अधिक है। प्रसिद्धि की इच्छा से अगर भक्ति होती है तो भगवान के साकार स्वरूप के दर्शन नहीं होते है।

२८ जन्म-जन्मांतर से जीवों को बेसुमार मुसीबतें है। चर्म चक्षु से दिव्य चक्षु पाने के लिये महाराज़ का भजन करें। परलोक में महाराज़ के पास स्त्री-पुरुष का भेद नहीं है तथा विषय वासना जैसा विचार भी नहीं है।

२९ जिसने अपनी जीभ पर जीत नहीं पाई वह कभी भी ब्रहमचर्य का पालन नहीं कर सकता है। अतएव संयमित आहार ले तथा हरेक इंद्रिय के आहार को शुद्ध रखें।

३० व्यक्ति के समक्ष नज़र नहीं रखनी चाहिए, परंतु वर्तन के समक्ष महाराज़ की नज़र है यह नहीं भूलना चाहिए।

३१ पूर्वग्रह जैसा कोई ग्रह नहीं है। नौ ग्रह बेचारे कोई अड़चन

नहीं करते, पूर्वग्रह तो जीव को विघ्नकर्ता है, उसे दूर करना चाहिए।

३२ दूसरे को प्रभु के स्वरूप का वास्तविक ज्ञान समझाने जैसी कोई सेवा नहीं है, परंतु स्वयं तो इसकी पूर्णतः समझ होनी चाहिए।

३३ प्रभु जैसा तथा उतना ही चैतन्य निर्मल हो तब ही प्रभु का साक्षात्कार होता है एवं प्रभु रूप हो सकते है।

३४ हमें कैसा वर्तन करना है यह किसी को पूछने की आवश्यकता नहीं है। कोई भी क्रिया करने से पहले यह
सोचें कि यह क्रिया महाराज़ को पसंद है? अगर दिल में हाँ हो तो वह क्रिया करें अन्यथा वह क्रिया न करें।

३५ दुःख, आपत्ति और शिक्षा चैतन्य को मोक्ष मार्ग पर ले जाती है।

३६ हमें जो स्वरूप पसंद हो उस स्वरूप में ही ध्यान केंद्रित करें अलग-अलग स्वरूप न लें। अलग-अलग स्वरूप लेने से ध्यान सिद्ध नहीं होता है।

३७ मूर्ति सिद्ध होने के पश्चात हरिकृष्ण महाराज़ ऐसा सौंदर्य धारण करते है कि उसकी कल्पना करनी मुश्किल है।
जैसा स्वरूप है उसका दिव्य दर्शन स्वयं देते है। अतः धैर्यहीन न हो भगवान के स्वरूप के दिव्य दर्शन के लिये धैर्य के सिवा छूटकारा ही नहीं है।

३८ भगवान एवं उनके मुक्त जब प्रकट होते है, तब जिसे भगवान प्राप्ति की ईच्छा होती है, प्रभु एवं मुक्त उसे स्वयं ही खोज लेते है।

३९ जो मुक्त हमें प्रकट मिलें हो उनकी स्मृति कर भगवान के

स्वरूप में संलग्न हो तो ध्यान अच्छा होता है।

४० मुक्त की सेवा करने वाले पर महाराज़ अति प्रसन्न होते है, अतः मुक्त की सेवा में देह को चँदन की भाँति घिसना चाहिये, क्योंकि मुक्त द्वारा महाराज़ ही सेवा अंगीकार करते है।

४१ मुक्त मनुष्य चरित्र करते है,क्योंकि वह हमें (जीवों को) अनुकुल होते है, अतः करते है। भगवान के स्वरूप की पहचान करवाने के लिये स्वयं मनुष्य जैसा होकर रहते है।

४२ मुक्त की दृष्टि में दैवी या आसूरी जीव ऐसा कोई भेद नहीं है। पात्र-कुपात्र देखे बिना ही वे तो केवल कृपा ही बरसाते है।

४३ महाराज़ तो जीव के ही होकर रहे है, परंतु जीव अपने टेढेपन के कारण भगवान के नहीं होते है।

४४ अनादि मुक्त विचरण न करते हो उस समय उनकी वाणी सुनना भी उनका साक्षात् समागम ही है।

४५ जिसे स्वामिनारायण भगवान का तत्त्व ज्ञान यथार्थ समझ में आ जाए उसके सुख की कोई सीमा नहीं रहती है।

४६ पंचविषय का राग जिसका टल गया हो, उसे प्रभु प्राप्ति सरल हो जाती है।

४७ अनुभव के द्वारा महाराज़ का स्वरूप समझना चाहिये। बुद्धि के द्वारा समझने पर क्षति रह जाती है।

४८ कार्य सफल हो न हो। आर्शीवाद में श्रद्धा और विश्वास होना चाहिये। आर्शीवाद जीव का हित करता ही है, ऐसा सच्चा निश्चय ही आसरे का स्वरूप है।

४९ स्वामिनारायण भगवान के सिवा अन्य कहीं भी आसक्ति

रह जाए तो जन्म धारण करना पड़ता है।

५० मुक्त का अंतर्धान होना और प्रकट होना श्रीहरि के संकल्प से ही होता है। प्राकटय एवं अंतर्धान यह भगवान में जोड़ती लीला ही है। मुक्त कभी भी गर्भावास में आते ही नहीं है। यह तो दिव्य संकल्प मात्र है।

५१ अनादि मुक्त की वाणी आत्मसात् कर पात्र हो तो ध्यान सिद्ध होता है।

५२ सर्वोपरि उपासना तब होती है जब महाराज़मय हो जाये। उपासना परिपक्व हो और महाराज़ की मूर्ति दृढ़ हो जाए तब तक चैन से न बैठे। पुरुष प्रयत्न चालु रखें।

५३ जन्म-मरण तब ही टलते हैं, जब आत्मा का परमात्मा के साथ संबंध हो।

५४ उत्क्रांति धीरे-धीरे होती है। एक दिन में नहीं होती है। आखिर में होती ही है।

५५ महान मुक्त आखिरी जन्म के आर्शीवाद दें, उन आर्शीवाद को ग्रहण करने की पात्रता बनानी चाहिये। अगर पात्रता न हो तो आर्शीवाद पुनः मूर्ति में चले जाते है।

५६ प्रसिद्धि के राग सहित की सेवा निष्फल होती है। सेवा – प्रसिद्धि =शून्य

५७ सच्ची शरणागति अर्थात् हमारे लिये प्रभु द्वारा निर्मित किसी भी परिस्थिति का सहर्ष स्वीकार करना, निर्विकल्प होकर, अखंड आनंद में रहना।

५८ पंचविषय संबंधित राग बाहरी सिंग के समान है। जिसे ज्ञान रुपी शस्त्र द्वारा सरलता से उखाड़ा जा सकता है, परंतु कीर्ति प्रसिद्धि का राग भीतरी सिंग के सदृश

है सूक्ष्म राग है। उसका जाना अति कठिन है, अनादिमुक्त की कृपा से ही यह राग टलता है।

५९ अनादिमुक्त का योग करते हुए उनमें से मनुष्यभाव दूर हो कर दिव्यभावना की दृढ़ता और संकल्प विचार न हो तो त्वरित पात्रता आती है।

६० हररोज़ महाराज़ की मूर्ति का निरीक्षण आधा घण्टा करने का प्रयास करें तो संकल्प-विचार बंद हो और आंतरिक वृत्ति होने लगे।

६१ मूर्ति के ध्यान के साथ पंचवर्तमान के सूक्ष्म आध्यात्मिक अर्थ महान मुक्त के पास से समझ कर उसका यथार्थ पालन करे तो पात्र होने में देर नहीं लगती है।

६२ मुक्त स्वयं की आध्यात्मिक शक्ति का निरर्थक उपयोग नहीं करते है, अन्यथा व्यापार कहा जाता है। प्रभु ने स्वयं भी नहीं किया है। अगर महाराज़ शक्ति का उपयोग करने की इज़ाजत दे दें, तो दुनिया में कोई दर्दी ही न रहे। अनंत प्रकार के चमत्कार हो जाए। इतनी सारी शक्ति आज के मुक्त में है। महाराज़ उस शक्ति का नियंत्रण करते है।

६३ मूर्ति में एकाग्र वृत्ति होने लगे, वह कारण सत्संग है। पश्चात उसे मंदिर की दौड़ा-दौड़ी, उत्सव आदि काय सत्संग गौण होने लगता है।

६४ अनादि मुक्त की रुचि तो जीवों के कल्याण करने में ही रहती है, अतः ऐश्वयार्थी की तरह कार्य की धमाल उनको पसंद नहीं होती है।

६५ महाराज़ तथा महान मुक्त की प्राप्ति हुई हो एवं उनके आर्शीवाद मिले हो तथापि उसके मद से बहक न जाए और

धर्म-नियम, आज्ञा पालन में शिथिलता न आ जाए इसका सदैव खयाल रखें।

६६ जिस साधक को श्रीजीमहाराज़ तथा उनके अनादि मुक्त की कृपा से प्रभु के दिव्य स्वरूप का साक्षात्कार होता है, वह चैतन्य निराकार में से दिव्य साकार बनता है। वह प्रभु के जैसा ही दिव्य साकार होकर प्रभु के संग रसबस लीन रहकर दिव्य सुख भोगता है।

६७ साधक को साधन की महत्ता हो तब तक कोटि जन्म तक प्रयत्न करे तथापि दिव्य सुख की प्राप्ति नहीं होती है एवं मुक्त दशा भी प्राप्त नहीं होती है। वह तो प्रभु तथा उनके अनादि मुक्त के साथ संलग्न हो, तब कृपा कर जीव को स्वयं के सुख में ले जाकर पूर्ण करते है।

६८ अनादि मुक्त की कृपा से आत्मा-परमात्मा का संग करने का यथार्थ ज्ञान हो यही सत्संग है।

६९ व्यक्ति कैसी भी उच्च साधन दशा में हो, तथापि उसके पतन की संभावना रहती है, परंतु प्रभु के स्वरूप के साक्षात्कार वाले इसमें अपवाद है। There is no season for a man to be corrupt, but an enlightened person is an exception.

७० प्रभु के पास प्रार्थना करे तब अपने निर्णय रखकर न करें, क्योंकि हमारा हित किसमें है यह हम नहीं जान सकते है। अतः प्रभु को कहे कि जिसमें मेरा हित हो उसके अनुसार कृपा करना।

७१ ध्यान एवं प्रभु की कल्याणकारी सेवा प्रवृत्ति दोनों साथ में करें तो कभी भी Monotony एकसूरता नहीं लगेगी एवं पात्रता जल्द ही आएगी।

७२ रात्रि को किसी समय नींद में जागृत हो जाए तो, पुनः सोने से पहले प्रभु के स्वरूप का ध्यान करें। इस प्रकार के अधिक अभ्यास से निंद्रा योग निंद्रा में बदल जाती है।

७३ इस लोक की औषधियाँ से तनका रोग जाता है, जब कि श्रीजीमहाराज़ की मूर्तिरूप दिव्य औषधि द्वारा तन, मन तथा चैतन्य के सभी रोग दूर होते है।

७४ औषध भी प्रभु का नैवेद्य कर ग्रहण करें, जिससे प्रभु उसमें संलग्न हो और रोग दूर हो जाए।

७५ जीवों को महाराज़ एवं मुक्त को पहचानना इसके जैसी बड़ी कोई सेवा नहीं है, प्रभु प्रसन्नता का यह सबसे बड़ा साधन है।

श्री स्वामिनारायण डिवाइन मिशन क्यों ?

श्री स्वामिनारायण भगवान के सर्वजीवहितावह संदेश अनुसार मानव जाति के श्रेय एवं प्रेय के लिये-

(क) सेवा - सदाव्रत के आदर्शानुसार बिना भेदभाव के आर्थिक मुसीबत का अनुभव करते भाईबहनों को आवश्यक सहायता पहुँचाना;

(ख) आरोग्य प्रसार की मार्गदर्शक व्यवस्था तथा रोगोपचार के परिचर्या केन्द्र-औषधालय की स्थापना-चलाना, अथवा ऐसा कार्य करती संस्था को सहायता करना;

(ग) आत्मिक शांति तथा मानवता को प्रसारित करते मंदिर, सत्पुरूष के स्मारक केन्द्र आदि का निर्माण-निर्वाह-विकास करना;

(घ) जीवन रचना में उपयोगी साहित्य एवं कला के विकास कार्य को प्रोत्साहित करना;

(च) सम्यक् अभ्यास के लिये पुस्तकालय, संग्रहालय, संशोधन केन्द्र की स्थापना - चलाना अगर ऐसे ईकाई को सहायता देना;

(छ) सर्व समन्वय स्थापित हो ऐसे सांसारिक एवं तत्त्वज्ञानविषयक प्रकाशन प्रसिद्ध करना तथा उनके द्वारा जनसमुदाय का ऊर्ध्वगामी विकास में सहायक होना;

एवं इस प्रकार :

(१) सामाजिक जीवन के आधार तुल्य सदाचार तथा नीति की कक्षा बलवान हो ऐसी प्रवृत्ति का आयोजन करना;

(२) समाज में ऐक्य एकता तथा आपसी सहृद्भाव वृद्धित हो, विश्वबंधुत्व की भावना का विकास हो एवं विसंवादिता दूर हो ऐसे कार्यक्रम देना;

(३) विश्व के धर्म तथा पक्षो के बीच संवादिता का जतन हो इसके लिये सर्वधर्मीय परिषद का आयोजन करते हुए आध्यात्मिक एवं सामाजिक उत्कर्ष को गति देना;

ऐसे सुआयोजित कार्यक्रम तथा प्रवृत्ति द्वारा परिपूर्ण भगवत्स्वरूप की प्राप्ति की ओर मानव समुदाय सर्वांगी विकास को प्राप्त कर गतिमान हो, ऐसा मिशन का शुभ आशय है।

जीवों को महाराज़ एवं मुक्त को
पहचानना इसके जैसी बड़ी कोई सेवा नहीं है,
प्रभु प्रसन्नता का यह सबसे बड़ा साधन है.

- पूज्य श्री नारायणभाई